पहिले इसे पढ़िये।

१। हमारे यहाये-वर्व के निर्णयमागर प्रेस, श्रीवेंक्टेश्वरंप्रस, लक्ष्मीवेंक्टेश्वरंप्रस, ज्ञानसागर प्रेस, हरिप्रसादमगीर थर्जा पुस्तकालय, तथा कलक ते के जीवानन्द विद्यामागर, इलाहावाद के इंडियन प्रेस, लखन क के नवलिक शोर प्रेस ओर कं की की नागरी प्रवारिणीसमा, स्वाद्वाद माकर कार्यालय वीसंमापुस्तकालय, लाजर से प्रेस, लप्न्यासकार्यालय, सपन्यासतर ग, भागवपुस्तकालय आदि समस्त छापखानों और पुस्तकालयों के छंपहुंचे समस्तप्रकार हिंदी समस्त प्रयोक भावसे मिलत हैं अर्थात् वर्ष की प्रस्तकें बर्द के माव कलक ते की पुस्तकें कार्य के मावसे मिलती हैं। जिनकी जिसप्रकार की पुस्तकें वाहिये हमारे यहास संगा लिया करें।

२। हमारे यहासे किमीको भी कमीशनहिं दिया जाता किंतु खासकी छपी तथा स्याद्वादग्लाकरकार्यालयकी पुस्तके एक प्रकारकी पाच लेने पर एक विना मृत्य भेजी जायगी।

३। मगाई हुई पुस्तके वापिस नहिं ली जायगी।

४। वी पी. भाठ आनेसे कमका नहिं भेजा जाता। आठ भानेसे कम लेनेवालोंको डाफ खर्च सहित टिकट भेजना चाहिय।

५। जो महाशय वी. पी. वापिस कर देंगे उनको फिर कमी वी पी निह भेना नायगा हिमाब में भूल हो तो डाक खानमें अर्जी देकर २१, दिन तक वी पी को रकता सकते हैं। फिर चिठा देकर हमसे भूल सुधरनालें।

६। फरमायसमें ने जितनी पुस्तकें तैयार होंगी-वाजारमें मिलेंगी उतनीं ही भेजदी जायगी। दो एक पुस्तककेंलिये ची पी रोका नहिं जायगा।

७। पत्र-नाम, ग्राम पोष्ट जिला नहित साफ हिंदीमें भे जैंगे तो उस की नामील ग प्र ही होगी लगरेजी उद्विगेरहकी, चिंद्र में ना तामील हानेमें प्रमाद होगा। उत्तर चहना हा तो जवाबी कह वा टिकट भजा।

> आपका कृपाकांक्षी श्रीलालजैन, भेनजा-जैनपुस्तकालय पे॰ बनारम सिटी।

जैनतिथिदर्पण वीरसंवत् २४३९। ई. १९१२-१३

								پسجسے			
का	र्तिकर्	Îέ	र्वारानि २५	ऽ ३९ ।	मार्ग	शि	पंवृ	, ८७	वीर मं	२४	3९।
ति	नार	ता.	विशेष वि	वरण	ात	वा	₹	ता	विशेष	विवर	al
3	राव	10	नवेवर । हा	नपुष्पद्त	3	सो	R	24	रोहिणीव	त ।	
9	साम	99			2	सग	ल	۽ دا			
•	मगल	93			3	ं बुध	•	20			
8	नु घ	43			٧	गुरु		2 C			
ų	गुर	48			-	शुक्र	;	9 C			
٤	গ্রুক	م و	गर्भ-नीमन	थका	Ę	राशि	- 1	₹ o			
પ્	गनि	3 €	-		4-6	र्वि	- 1	9	दिसंवर	189:	1
c	रवि	פי ר	अप्राद्धिकात्र	ारम ।	5 1	मोह	1	3		_	
5	सोम	30			90	भग	ਲ	3	तग-महा	वीरम्व	मा
3 0	भगठ	98			99	युव		R			- 1
35	यु ष	₹.			17	गुरु		4			
د ک	गुद	= 5			93	গুৰু		E			ı
43	হ্রফ	23	जन्मन्प -प	ีนวทจา	98	शनि		4			
34		3 3			٤ ۽	रवि	`	4			
94	रिव	75	जन्म-समय	नाथका							
-	डिनका	र्च	।घडिया ।	i i	पास यहण			राहि	का चोंद	ाङ्ग्य	11
₹	च म	बु	गु गु थ	फाल्गुण			₹	चि	म वु र	व श	श
1			श्रु च का	शनिवार	-	- 1	_		का, उ,र		ਲਾ
ৰ			रों ला य		रे तफ		य		1 1	वका	
ला			उ अ रो	— स्वप्र			च		उ अ र	ो छा	ग्र
व	1 = 1		च का उ	चंद्र			ये	ुंला	शु च व	त उ	अ
का	उ य		ला ग्रुच	भाइपद		<i>ب</i> {	का	उ	य गेल	ग ग्र	च
ग्र	चं क		क ने का	ग्रामवार १	-			<u>'य</u>	च का उ	इ अ	ये
य च	ला ग्र	चं	का उथ			- 1	उ		ये छा, इ		
उ	य ऐ	ला	गु च का	ও ৰত	त तर्र		<u> </u>	, चं	का उ	गया	ਲਾ।

	[,२]											
मा	र्गञ्चीर्ष	ग्रह	वीर सं २४३९।	å	षकृष्ण	गर्ब	ोर सं. २४३९।					
ໂຕ	वार	ता.	विशेष विवरण	તિ.	वार	nr.	विवय वियम					
9	मोम	c,	जन्मतप-९ष्पदत	q	च्व	૦૫	ज्ञान-माह्ननायका					
2	मगल	1 (दिसवर	3	गुरु	3 6						
3	वुघ	99		Z	शुक	30						
8	गुरु	93		પ	शानि	5 6						
٠,	সুদ্ধ	3 3		Ę	र्राव	= 3						
Ę	शान	96		3	श्राम	50						
ε	र्गव	96		c	मगल	39						
v	सोम	9 €		5	बुघ	١,	जनवरी १८१३ प्रा					
6	मगल	, 40		90	गरु	1 -5 }						
5	वुध	96		44	গ্রহ	3	बन्मतप-चह्रम्-					
90	गुह	98		95	शांन	8	(वा पार्श्वनाथ					
٠ ٩	হাক	30	जन्मतप-म ज्ञनाय	93	रवि	٠,	रोहिणीयत ।					
42	शनि	30	(ज्ञान नामनाथ	96	स्रोम	ξ	ञ्चान-शीतलजिनका					
93	र्शव	2 4	-	३०	भगल	1 1						
9 8	सोम	33	जन्मतप-अरनाय		}							
76	1	128		}								
1	عيصادات	_		-								

जिनशतक ।

यह प्रथ वि स १२५ को सालम विद्यमान आनार्यवर्य श्रीमत्मम-तलभड़ स्वामीकृत चित्र काव्यका है इसमें ११६ खोक हैं सबके सब खोका के मुरच आदि चित्र वन जाते हैं चित्र मो अतमें दिये गये हैं। विना टोका के इनका अर्थ कोई लगा नहिं सकता इसकारण सायमें मर-मिहभदकृत संस्कृत टीका आर श्रीयुत्त प लालारामजीकृत भाषाटाका भी छपाई है। ११६ खोकों में चौवीस तीर्थ कर मगवानकी स्तृति है। निनंके पदपदसे भक्ति टपकती है। पृष्ठ १२८ न्योकावर ॥) है।

मिलनेका पता-श्रील।लजैन

, भैनेजर-जनपुस्त कालय बनाग्सं सिटी।

जैनतिथिदर्पण वीरसंवत् २४३९। ई. १९१२-१३

का चिंक गुरु वीरित. २४३९। मार्गशीषंकृत्ण वीर सं. २४३९। ति. वार ता. विशेष विवरण ति. वार ता. विशेष विवरण र राव १० नवेंबर। झानपुष्पदंत १ सोम २५ रोहिणीवत। ३ सोम ११ १ ३ ४ गुरु २८ १ गुरु १४ गर्भ-निमनाथका ६ शनि ३० दिसंवर १९१२। ६ गुरु १४ गर्भ-निमनाथका ६ शनि ३० दिसंवर १९१२। ८ रावि १७ अष्टाधिकाप्रारंम ९ सोम २ तप-महावीरस्थामां १० मेगल १९ १० अष्टाधिकाप्रारंम ९ सोम २ तप-महावीरस्थामां १० मेगल १९ १० सोमल १ वृष्य ४ ११ गुरु ११ वृष्य ४ वृष्य ४					سنسيسيم	-			يسبجاها		ستنينسسا	_
र राव १० नवेंवर । ज्ञानपुष्पदंत १ सोम २५ रोहिणीवत । ३ सोम ११ २५ संगल २६ ३ वुध १२ ४ गुरु १८ ५ गुरु १८ ११ गुरु १८ ११ गुरु १८ गुरु १८ गुरु १८ गुरु १८ रावि १० सिसंवर १९१२। ८ राव १० मंगल १९ ५ गुरु १० सोम १८ गुरु १८ गुरु १८ जन्मतप-पद्मिमका १४ शिन १० सेगल १९ जन्मतप-पद्मिमका १४ शिन १० सेगल १९ जन्मतप-पद्मिमका १४ शिन १० सेगल १९ जन्म-संभवनाथका १२ गुरु १८ जन्म-संभवनाथका १२ गुरु १८ जन्म-संभवनाथका १० सोम उ. जन्म संभवनाथका १० सोम उ. जन्म उ.	का	र्त्तिकड्	J.F	वीरानि. २४	३ँ९ ।	मार्ग	शि	र्षवृ	ระบ	। वीर सं	. २४	३९।
३ संगल १२ ४ मंगल १२ ४ गुरु १८ ५ गुरु १२ ५ गुरु १२ ५ गुरु १२ ५ गुरु १२ ६ गुरु १५ गर्म-निमनायका ६ ग्रान ३० ६ ग्रान १६ ८ रिव १७ अष्टाहिकात्रारम ९ सोम २ ९ सोम १८ ९ सोम १८ १० मंगल १९ १० मंगल ३ तप-महावीरस्तामां ११ गुरु ५ १२ गुरु ११ ज्ञान-अरनायका १२ गुरु ६ १२ गुरु ११ ज्ञान-अरनायका १२ गुरु ११ ज्ञान चोग्राइग्रा । च्यान का उस्म से लाज ग्राच का ग्राच	ति.	वार	ता.	विशेष वि	वरण	ía.	वा	₹	ता.	विशेष	१ विव	(ग
३ संगल १२ ४ मंगल १२ ४ गुरु १८ ५ गुरु १२ ५ गुरु १२ ५ गुरु १२ ५ गुरु १२ ६ गुरु १५ गर्म-निमनायका ६ ग्रान ३० ६ ग्रान १६ ८ रिव १७ अष्टाहिकात्रारम ९ सोम २ ९ सोम १८ ९ सोम १८ १० मंगल १९ १० मंगल ३ तप-महावीरस्तामां ११ गुरु ५ १२ गुरु ११ ज्ञान-अरनायका १२ गुरु ६ १२ गुरु ११ ज्ञान-अरनायका १२ गुरु ११ ज्ञान चोग्राइग्रा । च्यान का उस्म से लाज ग्राच का ग्राच	२	राव	3.0	नर्वेवर । ज्ञा	नपुष्पदंत	9	सो	Ħ	२५	रोहिणी	वत ।	
प्र मंगल १२ प्र	 3	सोम	99			२	मंग	ल	२ ६	<u> </u>		
प गुरु १४ गर्भ-निमनाथका ६ ग्रांन ३० दिसंबर १९१२। ५ ग्रांन १६ ग्रांन १० स्रांम १० स्रा		मंगल	9 4			3	बुध	7	२७			
प गुरु १४ गर्भ-निमनाथका ६ शानि ३० दिसंवर १९१२। अप्राहिकाशारंम ९ सीम २ तप-महावीरस्थामां १० संगळ ३ तप-महावीरस्थामां १० संगळ १९ गर्भ गळ ३ तप-महावीरस्थामां १० संगळ १९ ग्रुह १० ज्ञान-अरनाथका १२ ग्रुह १० ज्ञान-अरनाथका १० ज्ञ	8	बुघ	93				गुरु		₹ €	,		
प्रावि १६ अप्राधिकात्रारंभ ६ सोम २ सोम १८ अप्राधिकात्रारंभ ६ सोम २ १० मंगळ ३ तय-महावीरस्वामां १० मंगळ १९ ११ वुघ ४ वन्मतप -पद्मप्रमका १४ शिन ७ वुघ ४ वि ८ जन्म-संभवनाथका १४ शिन ७ वुघ ४ वि ८ जन्म-संभवनाथका १४ शिन ७ वुघ ४ वि ८ वि १४ जन्म-संभवनाथका १४ शिन ७ वुघ ४ वि ८ वि १४ जन्म-संभवनाथका १४ शिन ७ वुघ ४ वि ८ वि १४ जन्म-संभवनाथका १४ शिन ७ वुघ ४ वि ८ वि १४ जन्म-संभवनाथका १४ शिन ७ वुघ ४ वि ८ वि १४ जन्म-संभवनाथका १४ शिन ७ वुघ ए वि ८ वि १४ जन्म-संभवनाथका १४ शिन ७ वुघ से वु मु शु था वि वि वु मु शु था वि वु मु से वु मु शु था वि वु मु से वु मु शु था वि वु मु से वि वु	۱4	गुरु	98				গুর	5	२९	ļ		- 1
८ रिव १७ अप्रिकिशिरंम ९ सीम २ १० संगळ ३ तप-महावीरस्वामां १० संगळ १९ १० वृध ४ १० वृध १० वृ	ξ	_	94	गर्भ-नमिना	यका	Ę			₹ •	_		
९ सोम १८ १९ वृध ४ ११ वृध १ ११ वृध १ ११ वृध १ ११ वृध ११ वृध १ १ १ वृध १ १ १ वृध	b		9 8	_		4-6				दिसंवर	159	51
१० मंगठ १९ ११ वुघ ४ १२ वुघ ४ १२ वुघ ४ १२ युद्ध ५ १२ युद्ध ५ १२ युद्ध ५ १२ युद्ध ५ १२ युद्ध ११ युद्ध य	اء		פי ד	अष्टाद्धिकात्र	रिम	5			२			ļ
१२ गुरु २० ज्ञान-अरनाथका १२ गुरु ६ १ गुरु १२ ज्ञान-अरनाथका १२ गुरु ६ गुरु १२ ज्ञान-अरनाथका १४ शनि ७ श्रे शनि २३ ज्ञान-संभवनाथका १४ शनि ८३ ज्ञान-संभवनाथका व्याप्त व्य	5		1 1				1		3	तप-मह	विरस	ामां 📗
१२ गुरु २१ ज्ञान-अराग्यका १२ गुरु ६ ११३ गुरु १२ जन्मतप -पद्मप्रमका १४ शनि ७ १४ शनि १३ गुरु १२ जन्म-संभवनाथका १४ शनि ७ १४ जन्म-संभवनाथका व्याप्त व्याप	90	मंग ल	98			99		•	४	I		J
१३ शक २२ जन्मतप -पद्मप्रमका १४ शिन ७ १० शिन २३ पिन ८ जन्म-संभवनाथका व्यास चित्रका चाँचिड़िया। व्यास चंद्रमहण र चं मं खु गु शु था फाल्गुणशुक्का १५ से खु गु शु था फाल्गुणशुक्का १५ से खु गु शु था फाल्गुणशुक्का १५ से खु गु शु था का उ अ से ला शु चं का	95	बु घ	२०		.	,					, ,	I
१३ शुक्त २२ जन्मतप -पद्मप्रमका १४ शिन ७ ११ शिन २३ जन्म-संभवनाथका ३० एवं ८ जन्म-संभवनाथका व्यास चंद्रप्रहण चंद्रप्रहण चंद्रप्रहण चंद्रप्रहण चंका उ अ रो ला शु चंका उ का रो ला ला शु चंका उ का रो ला ला शु चंका उ का रो ला	5 3	गुरु	२ १			93			Ę		,	}
दिनका चैं।घड़िया। खप्राप्त रात्रिका चैं।घड़िया। चंद्रग्रहण चंद्रग्रहण पंचे का उप्राप्त का	५३	_	२ २	जन्मतप -प	ग्रमका	98			٧			1
दिनका चें।घड़िया। खप्रास चंद्रप्रहण चंद्रप्रहण चंद्रप्रहण चंद्रप्रहण चंद्रप्रहण चंद्रप्रहण चंद्रप्रहण चंका उथा से लाल्गुणग्रुक्षा १५ चं में बुगु था काल्गुणग्रुक्षा १५ चं में बुगु था कालगण्युक्षा १५ चं में बुगु था यो ला या चंका उथा से ला या चंका या चंका उथा से ला या चंका या से ला या चंका उथा से ला या चंका या चंका उथा से ला या चंका या चंका उथा से ला या चंका उथा से ला या चंका चंका या चंका या चंका चंका चंका या चंका चंका चंका चंठा या चंका चंठा या चंका चंठा या चं	38	, ,	i "I	_		₹ 0	रिवृ	٠	ا ء			1
र चं मं खु गु शु था फालगुणगुक्का १५ र चं मं खु गु शु था फालगुणगुक्का १५ र चं मं खु गु शु था फालगुणगुक्का १५ र चं मं खु गु शु था र चं का उ या रो ला शु चं का या रो ला शु चं का उ या रो ला शु चं का उ या रो ला शु चं का या रो ला रो ला शु चं का उ या रो	94	रवि	₹ €	जन्म-संभव	नाथका				_			I
र चं मं खु गु शु था पालगुणशुक्षा १५ चं मा खु गु शु था पालगुणशुक्षा १५ चं मा खु गु शु था पालगुणशुक्षा १५ चं मा उ था पे छा शु चं मा उ था पे छा था	1 i	दिनका	चें।	घड़िया ।	•			;	राशि	का चैं।	चड़िय	TI
उ अ रो ला शु चं का वानिवारको २० से शु चं का उ अ रो ला चं का उ अ रो ला शु ७ वते तक अ रो ला शु चं का उ अ रो ला शु ला शु चं का उ अ रो ला शु चं का उ अ रो ला शु का उ अ रो ला शु चं का उ अ रो ला शु चं का उ अ का उ अ रो ला शु चं का उ अ रो ला शु चं का उ अ रो ला शु चं का उ अ रो रो ला शु चं का उ अ रो ला शु चं का उ अ रो रो ला शु चं का उ अ रो रो ला शु चं का उ अ रो रो ला शु चं का उ अ रो	I							_				
चं का उ अ रो ला शु ज वते तक अ रो ला शु च का उ ला शु चं का उ ला स्वप्रदेशका अ रो ला शु चं का उ अ रो ला शु चं का	4											
ला शु चं का उथा रो खन्नास चं का उथा रो ला शु य रो ला शु चं का उ चंद्रमहण रो ला शु चं का उथा का उथा रो ला शु चं का उथा रो ला शु चं का उथा रो शु चं का उथा रो ला सामवार के शासे असे ला शु चं का उथा रो रो ला शु चं का उथा रो	उ	य रो			_	-						
य रो ला शु चं का उ चंद्रयहण रो ला शु चं का उ य का उ य रो ला शु चं भादपदशुक्रा १५ का उ य रो ला शु चं शु चं का उ य रो ला रो ला शु चं का उ य रो ला शु चं का उ य रो रो ला शु चं का उ य रो				एल य			_		्य	ला श		')]
रोला ग्राचिका उथ """" । उथ राला ग्राचिका		्य च	का	उ अ य	_		J	च	का		य छ।	
रोला ग्राचिका उथ """" । उथ राला ग्राचिका		य ला	यु	च का उ						अ च		1 . 5
रोला ग्राचिका उथ """" । उथ राला ग्राचिका		उ स	ਹ	छ। य च	भाइपद्	गुक्ता १	, ,		1			
उमिता युचिका प्रका प्रकातक शुचिका यमा	्य	चका	19.	थ सला	बं । मवार व	हो ३॥			उ	च का	७ अ रा≕	
वाकाराळाडा चका। शिवकावावावाराळा	य			વતા હું લ				<i>ب</i>	이	201	성 ^다	,40 i
	12	अ।य	(O)	यु च का।				<u>ধ্</u>	प	laufa t	wid.	(A)

	[8]											
7	माघशु	कु ह	शिर सं. २४३९ ।	फ	ल्गुण	कृत	ग चीर सं. २४३९।'					
ति	वार	ता	विदेश विवणर	ति	वार	ता,	विशेष विवरण					
9	शुक	٧	फर्वरी २रा	9	शु नं	२१						
२	গলি	٥		२	ঘ্র	5.5						
3	रवि	8		3	रवि	3 3						
6	सोम	90	जन्मतप-विमलनाथ	٧	सोम	२४	मोक्ष-पद्मप्रभका					
4	मगल	99		4	मगल	۽ ب						
Ę	बुध ,	9 2	ज्ञान-विमलनाथका	Ę	बु ध	२६	ज्ञान-सुपार्श्वनाथका					
U	गुरु	93		او	गुरु	२७	ज्ञान-चद्रप्रभ-मोक्ष,					
૮	হ্যুক	98		6	शुक	२८	[सुपार्श्वनाथका					
3	शनि	94	रोहिणी व्रत ।	9	হানি	9	मार्च गर्भ पुष्पदत ' '					
90	रवि	98	जन्भतप अजितनाथ	90	रीव	ź						
99	साम	90		99	सोम	ą	जन्मतप-ज्ञान 🔸					
9 २	म गल	96	जन्मतप अभिनदन	9 3	मगल	8	मोक्ष-मुानसुव्रत					
93	वुध	99	जन्मतप-धर्मनाथका	43	बुध ।	4	-					
98)	२०		۹ «	गुरु	Ę	जन्मतप-वासुपूज्य					
94	} गुरु			3 0	शुक	اوا						
					~		C					

* ११ को जन्मतप-श्रेयासनाथका और ज्ञान-आदिनाथका !

वबईके छपे शुद्ध जैनग्रंथ।

जैनवाल वोधक प्रथम भाग ।)
दियातले अधेरा /)॥
समाधिमरण दो तरहका /)
अरहंतपासाकेवली /)॥
भक्ताभर माषा आर मूल संस्कृत/)
दर्शनपाठ बुधजनकृत दर्शनसाहित/)
शिखरमाहात्म्य भाषा वचिनका/)
सामायिक पाठ, आलोचनापाठ /)
कल्याणमदिर एकीमाव भाषा)॥।
छहढाला दौलतरामकृत वहे)॥

शीलकथा ।/) दानकथा ।/)
दर्शनकथा ।/) दिश्तेमोजनकथा ।/)
रिवित्रतकथा भाऊ किविकृत /)
सदाचारीवालक /॥
पत्रमगल रूपचंन्द्रजीकृत शुद्धपठ/)
मृत्युमहोत्सव वचिनकासहित /॥
निर्वाणकंड प्राकृत,भाषा महावीर/)
सामायिकपाठ भाषाटीका विधिस/)
भारतीसम्रह जिसमें ११ आरती)।॥
इष्टलीसी अर्थसहित /॥

	· · · · · · · ·	[٩]	
फा	ल्गुणशु क्क	बीर सं २ ४३९,	चैत्रकृष्ण स	दीर सं. २४३९।
নি	यार ता	विशेष विवरण	नि वार ना	विशेष विवरण
4 9 0 11 20 0 0 9 0 9 0 0 0 0 0 0 0 0 0 0 0 0 0	1	मार्च ३रा गर्म-अरनायका मोक्ष-मान्नायका रोहिणी वत । मोक्ष चड्रप्रभ और (गर्म समबनाय का अष्टान्हिका प्रारम	७ गुरु २७ ६ शुक्र २८ • शिन २९ ८ रिव ३० ९ सोम ३९ १० संगम ९	गर्भ-दीत्रनायका
93 98 94	गुरु २० शुक्त २ शान ,२२	होसिका । चद्रप्रहण ।	१२, गुरु ३ १३ शुक्र ४ १४, शान ५ १४ राव ६	द्वान-अनन्नाथका
छहर	इस्ट युपञ्जन	ासरी द्यानतकृतः) कृत वद अक्षरः /) ते काव¶ •जक /)	मुनिवशदीपिः	स्वार्थसृत्र मृलग्रुद्द-)॥ हा नयनमुखजाकृत)॥ त १ देउकी कहानी <)
रझ	हरदश्र ,वङा=	वार सान्वयायं 1)	_	२८ विनतिया) 🕪)
ļ.		ार बचानका यडा 🧳) शाक्टायनश्रीक	णसप्रह न्याष्टरण ३।)
मोध	तमार्गप्रकाशः	विचितिक १॥)	पाश्वेषुराण चो	पर्डवच ११)
স্তু	म्नर्वास्त्र दर	र्गानका भा)	प्रवचनसार व	वित्तवद १।)
वन	ग्रमीविलाम	कवित्तवद्द १॥)	धृत्तीस्यान पु	राणोंकी हैंसी 📂)
वृंद	बन विलाम्	" 10)	निखनियमपूर	ना संस्कृतभाषा i)
भा	पापृजासप्रह	ll)	मनोग्मा ॥)	न्नानसूर्योदयनाटक ॥)

	[;६]											
चैत्रद्	गुक्क वी	र र	तं २४३९।	ğ	द्यास	कृष	ग वीर सं २५३९।					
ति	वा₹	ता	विशेष विवरण	शि.	वार	ता.	विशेष विवरण					
9	स्रोम	v	गर्भ-मछिनाथ	9	स्रोम	2 9						
२	मगर	6		2	मगल	25	गर्भ-पार्श्वनाथका					
₹	व्ध	5	ज्ञान-कुथुन।य	3	बुध	⇒ ₹	•					
73	गुरु	40		४	गुरु	28	1					
4	যুক্ত	49	राहिणी। मोक्ष	4	হ্রান্স	ર્પ						
Ę	शनि	3 =	मोक्ष समवनाय	ε	शनि	२६	j .					
v	रवि	43		v	रिव	રહ	,					
•	साम	98		6	साम	3,6	· ·					
3	, मंगल	94		4	मलग	२९	ज्ञान-गुनिसुव्रत					
90	ं बुब	9 8	(अरनाथ मोक्ष	90	वुध	3 0	जन्मतप "					
99	गुरु	90	ज॰त॰शा॰मो॰	90	มู้จ	9	मई ५ वा					
13-63	गु क	96	ज,महावीरखा	99	হ্যুক	٦						
98	शनि	95)	t.	93	शनि	3	,					
१५	रवि	2 o	जान-पद्मप्रम	3 3	रवि	४	,					
मोक्ष-५	को आ	नेतन	।थका १५१ को	9 8	सोम	·	मोक्ष-नमिनाथका					
सुमतिन	थिका -र	नन्म	तप ज्ञान मोक्ष	3 0	मगल	€						

तरवार्थसूत्र वालगो वना भा टी ॥) भक्तामरस्तीत्र सान्वयार्थ द्रव्यमप्रह मान्वयार्थ कवित्त ।) सूक्तमुक्तावली सान्वयार्थ 🗥 1=) अताषतारकया श्रुतपचमीपू जन 📂) क्त्रच्डामाण भाषाष्टीका सहित।।) जैनविवाहपद्धति विधिसहित 📂) दि कैनप्रथकतां व उनके प्रय=) भाषानिखपाठसप्रह रेशमी गु॥) सन्वनित्तवल्लभं भा कावितास=) **जैनाधेद्धातप्रवेशिका**

जैनपदसप्रह पहि।=) दू।) ती।-) जैनपटसप्रह चौ. ॥=) पा ।=) ज्ञानद्रपण आष्यारिमक कवित्त अकलकदेवचारेत्र स्तोत्र भाषाछद्ः) भूध(जैनशतक 🔑)॥ पर्चे द्रियसवाद /) उपामितिंभवप्रपचाकथा प्र. सं ॥) बारसभणुवेक्सा कुदकुंदकृत भा. /) षुधजनशतसई ७०० दोहे क्रियामजरी ,विधिसाहित सप्तव्यसनचरित्र वचनिका पुरुषार्थसिद्धगुपायसार्थ ्पता-श्रीलालजैन मेनजर-जैनपुस्तकालय वनारस सिटी

	[0]											
वेइ	वैज्ञाखशुक्र वीर मं २४३९। ल्येप्टकृष्ण वीर सं २४३९।											
नि.	वार	 	विशेष	विवरण	ति	वार	वा	विशेष विवरण				
3	वृध	v	जन्मतः	पमोस	9	बब	3 9					
2	गुरु	e	रेतहर्णा	হ ল	= }	गुरु	3 3					
3	গুক	3	अक्षयत्		3		, 5 3					
¥	ग्रीन	9 >		_	1	धनि	- 6					
4-5	रवि	99	ग॰मोः	अभिनटन	6	र वि	120					
و	स्रोम	92			5 1	माम	• ξ					
ے	भगल	33	गर्भ-घा	गेनायका	3	नगर	ا و					
٩	ब् ध	128			2	वृध	30	गर्म-श्रेयासनायका				
3 0	गुरु	90,	शन-मह	श्वीर खा	١,	-	= % ,					
• •	इ.स	48		_	0.	<u> </u>	3 -	गर्म-विमल्नाय				
37	शान	50			٠,٩	गनि	3 9					
.3	रीव	٦٠			32	र्ख	9	जून । जन सनंतनाय				
38		54			13	मान ।	٥					
34	सगल	30			98	मगल	, 2	जम्मतपमेक्ष 🖊				
		1			3 -1	बु घ	¥	रोहिणा गर्भ व्यक्तित				
सन्म	ਜ ਦ -ਦੇਸ਼	FT 9	के क्या	mara I		120 n	122	५० हो शानियाग्रहा ।				

बन्मतप-मोरू १ की फुशुनाथका | जन्मतप मोस १४ की शानिनाधका ।

जननत्वप्रकाशिनीमभा इटावाकी ट्रेक्ट्रें।

बार्यमतनीला । में महदा २४) आयोंका तत्त्वहान)॥ से २) इंधारना कर्तृत्व)। से । । इर्रातिनिवारण)। से १) मजनमङ्गे प्र माग)॥ हि. साग)॥ से २) जीनयोंके नाम्निक्त्वपर विचार)। से १) धर्मानृत रखायन /) से ५) स्थिक तृत्वमीमाना /) में ५) भूगोलमीमाना)॥ सायोंकी प्रजय /) से ५) शास्त्रार्थअजमेरका पूर्वरग ॥ में १४)

जनधर्मप्रचारिणीसभाकाशीकी ट्रेक्टें! सवातनंजनधर्म)। मै २) श्रीमहाबीरस्त्रामा)॥ मै. २) इस्रादि।

मिलनेका पता-श्रीसालजन

मैनेजर-जैनपुन्तकालय वनारम मिटी।

l			L	.	J				
क्यें	ষ হ্যঃ	Ę ē	गीर सं २४३९।	साषाढ कृष्ण वीर सं. २४३९।					
ति.	वार.	ता	'विशेष विवरण	fa.	वार.	ता	विशेष विवरण		
٩	गुरु	7		9	गुरु	98			
२	习邪	Ę		٦.	शुक	२०	गर्भ-आदिनाथका		
3	शनि	ષ્		3	शनि	२१	,		
8	रवि	6	मोक्ष-धर्मनाथका	8	रवि	2 5			
4	सोम	9	श्रुतपचर्मा 🛊	4	साम	२३	_		
Ę	मगल	90		Ę	मगल	28			
v	वुध	99		U	वुध	2,4	मोक्ष विमलनाय		
6-9	गुरु	93		v	गुरु	२६			
90	शुक	93		ے	शुक	२७			
99	शनि	98		9	शनि	२८			
92	र्वि		जन्मतपसुपार्श्वन (थका	90	रीव	२९	जन्मतप नमिनाथ		
13	सोम	9 4		99	सोम	३०			
98	मगल		l .	9 3	मंगल	9	जुलाई ७ वा		
94		96	l	9 3	बुध	2	रोहिणीवत		
	• इस	द्न	शास्त्रपूजा, शास्त्रदान	98	गुरु	3			
शाह	राकी सं	भार	करनाचाहिय।	30	গুক	6			

चरित्रगठन ।

कैसा ही कोई युरे आचरणोंवाला क्यों न हो जा इसे एकबार पढेगा उसी घडीसे अपने आचरण सुधारनेकेलिये तैयार हो जायगा । इतना ही नहीं, उसे अपने बुरे आचरणोंपर घृणा हो जायगी और फिर वह कभी उन का नाम भी न लगा । लोग अपनी सतानकों शिक्षित और अचिरित्र वनाने केलिये हजारों रुपया खर्च कर डालते हैं तो भी सफल मनोर्थ नहीं होते हैं ऐसे लोगोंको अपनी सतानकों यह पुस्तक देकर परीक्षा करना चाहिये। जो नवयुवक वियाधी अपना चरित्र उत्तम बनाना चाहते हैं उन्हें यह पुस्तक अवस्य पढना चाहिये। इससे मनुष्य अपने समाजमें आदर्श बन सकता है. हिंदीमें यह पुस्तक एक रक्ष है। पृष्ठ २३२ मूल्य बारह आना।

आधाढ शुक्क वीर सं. २४३९। श्रावण कृष्ण बीर सं. २४३९। ति. वार. ं विशेष विवरण ति. वार. ता विशेष विवरण १-२ शिन ५ १ रीव ६ १ रीव ६ १ सोम ५ १ मंगल ६ १ गुरु १० १ शिन २० १ गुरु १० १ शिन २० १ गुरु १० १ शिन २० १ शिन १२ १ सीम १८		- [9]											
१-२ शिन ५ १ शान १५ गर्भ-मुनिमुत्रतका १ शान १५ गर्भ-मुनिमुत्रतका १ शान १५ गर्भ-मुनिमुत्रतका १ सीम १९ मंगल १२ गर्भ-महावीरस्तामी ५ युध १३ गुरु १९ मो. नेमिनाथ अष्टा- ७ शुरू २५ शान १९ शान १९ शान १९ सीम १८ गर्भ-कुंथुनाथका १२ मंगल १५ गुरु १२ गर्भ वुध ३३ गुरु १९ मंगल १५ गर्भ वुध ३३ गुरु १९ गर्भ वुध ३२ गर्भ वुध १४ गर्भ वुध ३२ गर्भ वुध ३२ गर्भ वुध १४ गर्भ वुध ३२ गर्भ वुध १२ गर्भ वुध १२ गर्भ वुध ३२ गर्भ वुध १४ गर्भ वुध १२ गर्भ वुध ३२ गर्भ वुध १४ गर्भ वुध ३२ गर्भ वुध १४ गर्भ वुध १२ गर्भ वुध	आष	शढ इ	îæ	वीर सं. २४३९।	श्र	ावण व	कृदव	ां बीर सं. २४३९।					
र्शन रें नि से प्रमान	ાંત.	वार.	·	विशेष विवरण	ति.	वारं.	ता	विशेष विवरण					
१५ शान १	4	र्गव साम मंगल वुध गुरु शनि रावि सोम मंगल वुधी	ائد کا ۸ هر ق قد قد قد قد قد قد الد	ं मो. नेमिनाथ अटा-	عد سد به کلی شد ک ای می می می میر سد به	रीव संगल युथ गुरु श्रीव संगल वुध संगल वुध संगल वुध संगल संगल संगल संगल संगल संगल संगल संगल	5 5 5 5 5 5 5 5 6 7 7 7 7 8 9 5 5 6 5 6 7 8 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9 9	गर्भ-सुनिसुत्रतका गर्भ-कुंथुनाथका					

दिलचस्प ऐयारीके उपन्यास ।

चंद्रकांता चारों भाग बढ़े अक्षर २) चंद्रकांता चारों भाग गुटका छोडे अक्रर १) चंद्रकांताभंतित वहे साइजमें २४ माग १२) चंद्रकांता संतित २४ भाग गुटका ६) भूतनायकी जीवनी चंद्रकांतामें जिस भूतनाथका नाम आया है उसका अदुतचरित्र पांच भागोंमें ३।॥) मोती महल १) कुमुमलता ऐयारी और तिलक्ष्म २।) दो नकावपास २०००) नरेंद्रमोहिनी उपन्यास १) कुसुमकुणरी १) विशाचपुरी ॥ चंद्रमुखी ॥ सूर्यकांता ॥)

ये सब ऐयारीके उपन्यास एस दिलचस्प हैं कि एक बार हाथमें लिये वाद पूरा किये विना पुस्तक हाथमें से नहिं छुटती । खाना पीना वा जहरी काम भी उसकी यांचकर ही करने पढ़ते हैं। शुठ समझते हैं तो १) का चद्रकांता उपन्यास ४ भागका गुटका मंगा देखिये। फिर क्या मजाल है जो '२४ माग संतति भीर ५ भाग मृतनायकी जीवनी न देखें।

जासूसी (गुप्तपुलिसके) उपन्यास ।
कटोरामर ख्न ॥ ग्रारहस्य ॥ ख्निमिश्रित चारी ॥) कटाक्षिर ॥।)
विकट वदलैवल सिवत्र १) सबा बहादुर ४) मायावा १॥) जुमेलिया ।)
दो विहिन ॥।) ख्न २) लाइनपर लास १) विलायती लासूस १) अद्भुत ख्न २) अद्भुत लामूम २) हलारहस्य १।) गोविंदराम ॥।) जासूम चकर में ॥।) दारागाका ख्न ॥) लाखरपया ॥ इनिका भेद ॥) प्रतिज्ञापालन १।)
मनोरमा जादुगरनीकी लामूसी ॥ एरिमल ॥।) सजीवलाश ।) पद्मावती ॥। हमीना ॥) हम्मामका मुरदा । वेवीसिंह विकट जासूस २। चह-क्षाला १) नकलीरानी ।) विचित्रख्न । नोलखाहार । लगहाबुनी ।
तातियां भील । हलारहस्य । चेरसे वहकर चोर । लिंदकी लास । देखून । अवदुलाका खून =)
पता श्रीलालजैन मैनेजर -जैनपुस्तकालय बनारस सिटी।

म	द्भपदः	ग्रक्र	वीर सं २४३९।	वाश्विनकृष्ण वीर स. २४३९।					
ાંતે	वार	ता	विदेश विवरण	ান.	वार	ता	विशेष विवरण		
•	सोम	3	सितवर, लब्यांव,प्रा.	٦	मग	95	यो का कल्सा		
-	मगल	3		ર	वुध	טד	गभ नेमिनाय		
3	बुघ	1	राटतोजन्नत	3	गुरु	36			
8	गुरु	8	•	४	गुक	-5			
4	<u> </u>	6	पु॰ द॰ वन प्रारम	4	गान	2 e	}		
ε	श्रीन	(& !	गर्भ सुपाश्वनाथ	ų	रावे	29			
v	र्शव	ړ د ,	निर्देष नुकावाली	٠	सोम	٦ -	रोहिणीवन ।		
6	सत्स	101	•	-	नगल	5 3			
5	मगल	e 1	•	9	व्ध	3 6			
90	ਕੂਬ	90	सुगध दशमी	90	गुरु	۽ د			
95		,991	धनतवन प्रारभ	99	गु क	२६	d.		
42	g%	93	रतत्रयकाजीवत	92	शनि	و -			
۹ ۽	शनि	93	!	43	रोव	2 C			
30	रीव	98	अ॰च॰मो वाम्रुप् ज्य'	98	साम	25			
9 -	स्रोम	ا م ا	चड्रघहण ।	30-9	मगल	30	ज्ञान-नेमिनाथका		
_							والمستحدد والمتهامية		

अच्छे २ दिलचस्प उपन्यासोंके नाम ।

किटेकी रानी ॥।) कालीनागिन समाजका अन्ठा चित्र १) जीवनप्रभात
१) चीवनसध्या ॥।) देवी-थान् विकासदकी देवीची बरानी १) नरिपशास
(रेनल्डका उपनास) ३) माधवी माधव २ अथमें अनर्थ १) विषवृक्ष १)
रमा और माधव ॥) लखनऊकी कत्र २) ससार कक्ष १) ससारदर्ण २)
सूर्यकाता उपन्यास ॥) चद्रलोककी यात्रा १) नृतनचारत्र १ डवलवीवी ॥)
यदा माई ॥।) तीन पतोहू १) भीजपुरका ठगा (तसलवा तोरकी मोर) ॥)
हुर्गेशनदिनी ॥।) नवाचनीदनी दुर्गेशनडनीका परिशिष्ट १। क्या सरिसागर
१६ भाग ८) उपन्यास भदार २ १ छोट २ उपन्यास ॥।) किसानकी वेटी १)
श्रीलालजन मेनेजर जैनपुस्तकालय,

दनारस स्टिं।

				1					
=1	ाश्विन	গ্রঞ	बीर स. २४३९।	कार्तित्रकृष्ण वीर सं २४३९।					
ति.	वार	রা	विशेष वित्ररण	ति.	वार	ता.	विशेष विवरण		
S' 18	वुध गुरु	ر ، ه	सक्दबर १०वा	٥,	गुरु शुक	र ६ १ ७	गर्भ-अनतनाथका		
١ . و لا	शृक शनि रवि	3 8		, מל אח	शनि र्राव सोम	96	रोहिणी । झान- (सभवनायका		
E 3	राव सोम मंगल	J. W 9	मोक्ष-पुष्पदत और	e -11 -15	माम मंगल चुष	२ ० २ १ २ २	(सम्प्राप्य		
9 o	वुध गुरु	८ ९	। शीतलनाथ विजय दशमी ।	८ ५ – १०	गुरु जुक	5 & 5 &			
9.4	शिन	99		99	शांन राव	ગ પ ગ દ્			
9 3 9 3 9 2	सेंाम		:	50 68 63	सोम मगल	२७ २८ २९	1		
90	1	ام يو		`	बुघ		त्सव ।		

बालकोषयोगी पुस्तकें ।

हितापदेशमाधा टीका सहित १) बालविनाद पाचों माग (तस्तीरें उपदेश)
१८)॥ लक्कोंका खेळ ८४ चित्र हैं ८)॥ खेळतमासा चित्र मयकविता
के ८) सचित्र अक्षरिलर्षा ८) जनवालवोधक प्रथम माग ।) वालबोध
जैनधर्म १-२-३ माग ८)॥ चौंधामाग।८) हिंदीकी पहिलो ८)॥ दूसरी ।)
तीसरी ।८) विश्वलोचनकोश (जैनकोश) मा टी स. १।८) अमरकोपमाषा
टीका सहित १॥) ऋदि धनकुमानेकेलिये कल्पवृक्ष १) सम्पत्तिशास्त्र
धनकमानेके उपाय २॥) स्वामी और स्त्री ॥। विश्वला २॥) वचोंकाखिलौना
।-) वालखास्थ्यरक्षा ॥) वालोपदेश ।) वालहितोपदेश ॥) वालपचतत्र ॥।
वालहिंदील्याफरण १३६ पृष्ठ ।

पता-श्रीलालजैन म्नेजर जैनपुस्तकालय वनारम सिटी।

स्यादादप्रंथमाला ।

स्याद्वादमंधनालामें सब प्रथ भाषा, वा भाषाटीका सहित लगते हैं। वार्षिक न्योलावर ५) ६० है डाक्सवं लुदा है सो प्रस्के अक डाक्सवं मानके वी. पी से भेजा जाता है। पाव रुपयोंमें ५० फारमतक प्रथ भेज जाते हैं। एक फारममें वहें वहें ८ छंटे छोटे १६ पृष्ठ होते हैं। हालमें तीन प्रय कर गये। जिनदातक संस्कृत तथा भाषाटोस्प्रसहितफारम ८ पृष्ठ १८८ न्यो० १।३ धर्मप्रक्षोत्तरवचनिका फान्म ३४ पृष्ट २६८। बौधा प्रय सान्वयार्थ व भावार्थमहित तन्वार्थसार छपंगा। हालमें श्रीक्षादिपुराणजी संस्कृत और वचनिक्षवहुत ही सुदर कररहे हैं। जसके अनुमान २५० फारम वा२००० पृष्ट होंगे यह प्रथ भी हरमहीने जितना छपता है सबसे भेजा जाता है। ५० फरस्म प्रेहरे बाद फिर सदके ५) रु भेजने होंगे। जिनको नये र पर्योकी खाच्या- यक्तता है ५) ह भेजकर वा वापीने कररिक्षेत्रय मगासर प्राहक बन जाते।

सनातनजैनग्रंथमाला ।

इस प्रयमाल, में सब प्रथ सस्कृत प्राकृत व सस्कृतटीकासिहत छाते हैं। यह प्रथमाला प्राचीनप्रधोंका लीगेंद्वारवरके सर्वधाधारणमें जैनधर्मका प्रभाव प्रगटकरनेकी इच्छासे प्रगट की जातो है। इसमें सब विषयोंके प्रय छोते। हालमें साप्तपरीक्षासटीक, समयसारनाटक दो सस्कृतटीकासिहत, छा रहे हैं। इनके पश्चाद रिवेषणाचार्यकृत प्रभुराणजी वा राजवित्तक्ती छोते। इसकी वार्षिक न्योछवर ८) हि॰ है। प्रलेक सक ९० फारमका होता। जिसमें दो से स्थिक प्रथ निहें होते। डॉक खर्व खुदा है सो प्रलेक सक दाक खर्व के वी थी से भेजा जायगा। यह प्रयमाला जिनधर्मका जीगोंद्वार करने वाला है-इसक प्राहक प्रलेक जैनी भाई व मंदिरजीके सरस्वतीभेगारको यनकर सब प्रथ सप्रह करके सरक्षित करना चाहिये और धर्मारमा दाववीरोंको इसह प्रथ नगल्य सन्यमिती। वह नोको पुरत्तक खर्वोको वितरण करना चाहिये।

पता — पन्नालाल वानलीवाल

मालिक-स्याद्वाटरत्नाकरकार्यालय, पोष्ट-वनारस सिटी।

संस्कृत और नवीन हिंदी अनुवाद सहित श्रीआदिपुराणजी छप रहे हैं।

न्योछावर ५४) रु. डाक खर्च जुदा।

इस प्रंथके मूल ऋोक अनुमान १३००० के हैं और इसकी वचितका जयपुरवाले पाडत दोलतरामजी कृत २५००० ऋोकों में बनी हुई हैं। पहिल इसी वचितकाके छपानका विचार किया था परतु मूल प्रथसे मिलान पर माल्य हुवा कि प. दोलतरामजी वे पूरा अनुवाद नहिं किया। भाषा भी हुढाडी है सब देशके भाई नहीं समझते इसकारण अतिशय सरल सुंदर अतिलपयागी नवीन वचितका बनवाकर छपाना प्रारम किया है। वचितकाके ऊपर सस्कृत ऋोक छपनेसे सोनेमें सुगध हो गई है। आप देखेंगे तो खुश हो जां-यगे। इसके मूल सहित अनुमान ५२००० ऋोक और२००० पृष्ट होगे

इतने वहे प्रथका छपाना सहज नहीं है हर दूसरे महीने

८०-१०० या १२५ पृष्ठ छपते हैं सो हम आजतक छपेहुये कुछ
पत्रे भेजकर ५) रुपये मगा छेगे, उसके वाद हर दूसरे महीने

जितने पत्र छपेंगे भेजते जायगे ७२० पृष्ठ पहुचनेपर फिर ५) ह.

पद्मागी मगा छेंगे। इसीतरह प्रथ पूराकर दिया जायगा।

यह प्रथ ऐसा उपयोगी हैं कि यह सबके घरमें स्वाध्यायार्थ विराजमान रहै। यदि ऐसा नहीं हो सकै ती प्रसेक मंदिरजी व वैसाङ्यमें तौ अवस्य ही एक २ प्रति मंगाकर रखना चाहिये।

पत्र मेजनेका पता-पन्नाळाळ वाकळीवाळ,

मालिक-स्याद्वाद्ररत्नाकरकार्यालय वनारस सिटी।

सत्यवादी।

सत्य एक अपूर्व रत्नाकर है, नो इसमें अवगाहन करते हैं, उन्हें अलम्य रत्न प्राप्त होते है ।

मथम भाग } अगहन, पौष श्रीवीर नि. २४३९ }

श्रीसीमन्धरस्वामीके नाम

खुली चिडी।

(रेखक, श्रीयुत् वाडीलाठ मोतीलाठ शाह)

प्रेमके समुद्र हे प्रमो । मैं आज्ञानी हूं, चारों ओरसे मोहपाशर्में फॅसा हुआ हूं, अदारण हूं और अनेक प्रकारकी आधि न्याधिसे असित हूं। ऐसी भयंकर स्थितिमें किसके पास जाकर मै भीख मागूं ह किससे ज्ञानका मार्ग समझूं ? किसके पास जाकर हृदयकी उत्कण्ठा मियञं और किसके द्वारा ज्ञानांजन अंजवाकर अज्ञानांन्य दूर करूं ! मुझे ऐसा परम पुरुष अमीतक कोई प्राप्त नहीं हुआ। इसींसे मूळकर यहां वहां मटकता फिरता हूं-इघर उघर टकराता फिरता हूँ। कहीं भी सच्चेमार्गके न मिछनेसे मेरी यह हाछत होगई है। पर है विमो! आप तो दयालु हो, भक्त वत्सल हो, अन्वेके

छिए आंख हो, अज्ञानी पुरुषोंके हृदयमें ज्ञानका प्रकाश करनेवाछे हो, संसारका उद्धार करनेवाछे हों और कछियुगमें भी सत्य-युगके प्रवर्तक हो। इस प्रकार आपकी गुणमाछा सुनकर ही मै आपकी शरण आया हूं।

हे दयाके समुद्र! आपके अपार करुणासमुद्रमेंसे एक करुणाकी बूंद इस तृषित पथिकके छिए भी दान करो । मुझे पूर्ण भरोसा है कि मेरी यह आशा व्यर्थ न जायगी। जबतक आपमें दया है—जब-तक यथार्थमें आप करुणासागर कहे जाते हो—तबतक ऐसी आशाके रखनेका मुझे पूर्ण अधिकार है।

शाप दूर हो, इसकी मुझे कुछ चिन्ता नहीं । जो लोग स्थूल हाष्टिसे देखते है उनके लिए तो आप सचमुच ही बहुत दूर हो । परन्तु इससे मुझे क्यों चिन्ता हो? प्रेममें—उन्नत प्रेममें—अवर्णनीय बल है। उसमें संकीर्णताको जगह नहीं। करोडों कोशकी दूरिपर रहते हुए भी हृदय दूसरी ओर आकर्षित हो जाता है, यह सच्चे प्रेममें शक्ति है। जब मुझमें आपकी भक्ति है—मेरा आपपर सचा प्रेम है— तब मुझे आपके दूर रहनेका कोई दु:ख नहीं।

कमल करोडों कोशकी दूरीपर रहता है, परन्तु सूर्यको देखते ही वह विकसित हो उठता है। चन्द्रकान्तमणि चन्द्रमासे बहुत दूर होनेपर भी उसके उद्यके साथ ही द्रवित होने लगती है। तब है करणानिधान! आपके दूर रहते हुए भी यदि आपके प्रति मेरा पूज्य-माव है—भक्तिकी सरलता है—तो इसमें सन्देह नहीं कि वह पूज्य-माव—वह भक्ति—आपको मेरी ओर खींच सके। कदानित आप यह समझो कि मुझमें वैसा वल, वैसी भक्ति, वैसा पुज्यमाव

सौर आपके देखनेकी वैसी शक्ति नहीं है तो उसे आप ही पूर्ण करना | जिसकी कमी हो उसका पूर्ण करना आपके हाथमें है । पर हे नाय! अब आपका इघर आये बिना छुटकारा नहीं हो सकता ! आइये! अघमोद्धारक! आइये!! इस हृदय मन्दिरमें पधारिये ! पर हे नाय! मुझे इस बातका वड़ा दुःख है कि आपकी सेवा करने के छिए मेरेपास कुछ नहीं है । में किससे आपकी सेवा करंद ! इसकी मुझे कुछ सूझ नहीं पड़ती । मैं तो केवछ यही बारबार आर्थना करता हूं कि हे करुणासागर! आप आड़ये और मक्क जनोंकी अभिछापा पूरी कीनिए।

हे गुरुदेव ! में आपके पाससे घन, दौछत, आदि कुछ भी नहीं सागता । पर हां एक चीजकी मुझे अवस्य अरूरत है । उसके छिए में आपसे मील मागूंगा । मुझे विश्वास है कि आपसे चिन्ताम-णिके पास मेरी याचना-मील-व्यर्थ न जायगी-मुझे निराश न होना पढ़ेगा । आप मुझे मेरी मांगी हुई मिला प्रदान करेंगे । में आपकी सेवा करना मागता हूं-आपके चरणकमछकी सेवाका वत चाहता हूं । यद्यपि में यह अच्छी तरह समझता हूं कि तछवारकी घार पर चंछनेसे भी कहीं अधिक मयंकर यह वत है पर फिर भी इसीकी याचना करता हूं ।

हे विभी ! आपको वहां अकेटा रहना कैसे अच्टा टगता है है हम छोगोंको अज्ञानान्यकारमें छोड़कर आपका वहां रहना क्योंकर उचित हो सकता है ! आज आपके पवित्रधर्मकी स्थिति कैसी होगई है ! आप इससे अनिभन्न नहीं हैं । नहीं जान पड़ता फिर आप इस ओरसे क्यों निरुद्यमी हैं ! अन अवधि आगई है ! श्रदि अत्र भी आप इसे इसी स्थितिमें बहुत दिनोंतक रक्लेंगे तें। इसका क्या परिणाम होगा यह कहना जरा कठिन है।

आप सन जानते हो । आपकी यह गहरी चुपकी-यह नहुतः दिनोंकी मौन अवस्य किसी प्रयोजनको लिए हुए है। पर अन यह छोडनी पडेगी । हे प्रभो ! हे अनाथरक्षक ! अन इस मीनका स्याग करके इघर आइये! अवस्य आइये!! और फिरसे ज्ञानदीपकका प्रकाश कीनिए। फिरसे संसारकी सत्य और पवित्र मार्गपर श्रद्धा कराइये । आपके द्वारा प्रकाशित ज्ञानरूपी सूर्यको अज्ञान रूपी बादलोंने बहुत दिनोंसे आच्छादित कर रक्खा है । भर्मीतक तो उस प्रकाशकी ज्योती कुछ कुछ टिमटिमा रही थी पर अत्र वह भी बिलकुल बुझना 'चाहती है । हे नाथ ! जिनको आपने मालिककी माति हमारी रक्षाके लिए भेने थे-जिनको आपने अपने प्रतिनिधिकी जगह स्थापित किए थे—वे अब केवल अपनी सत्ता—अ-षिकारके-छोभी हुए दीख पडते है। मान उन्हें बहुत सुहाता है। स्वार्थने उन्हें अन्वे वना दिये है। अव हमारी रक्षा करनेवाला कोई नहीं है। इसलिए हे प्रमी! आपके यहाँ आये बिना कोई मार्ग हमारे सुधारका दिखाई नहीं पडता । अन वह समय नहीं रहा जो आप अपने शिष्योंको भेजकर फिरसे धर्मका मार्ग चलावें-उसका रुद्धार- करें। अत्र तो आपहीको आना पडेगा । क्योंकि वस्तुकी परिस्थिति ही ऐसी होगई है जो आपके आये बिना उसका सुघार होना कठिन है। इस भयानक समयमें सामान्य शिष्योंके द्वारा यह गाढ़े अन्धकारका—पोपलीलाका—अभेद्य आवरण नहीं भेदा ना सकेगा-नहीं हटाया जा सकेगा। हे प्रभो। इतना दुराग्रह बढ़ गया है, इतनी संकीणे दृष्टि होगई है और अमिनानका साम्राज्य इतना बढ़-गया है कि उसके तोड़नेके टिए सामान्य हायीकी नहीं किन्तु गन्ध-गनकी नक्तत है। छोटे छोटे तोरे इस गाहे अन्यकारको कमी नहीं चेद सकेंगे । अब तो हमें आपकी-ज्ञानसूर्यकी-ही आवस्यकता है। खाप सदा विद्यमान रहते हो, धर्मनी रहा करते हो, उसके हितके हिए प्रयत्न करते हो, उसे नष्ट होनेसे बचाते हो और उसके चारों ओर अपने धर्मराजक हार्योको हर समय रक्ता करते हो। पर यह हाल बहुत थोड़े जानते हैं। जब यह हाल ही थोड़ेसे छोगोंको जात है तन उसपर श्रद्धा-मक्कि-रस्तेनवाछे बदि कोई वि-रहे हों तो इसमें आखर्य क्या ? पर ऐसे किरहे दो, चार, पांच, दश इस समयमें भी हों तो व बहुत अच्छे हैं। यह मैं आपको शुद्ध व्यन्त.करणमे क्थिम दिखाता हूं । हे पाछक 1 आपको मानकी अन यवा पूजनकी कुछ दरकार नहीं है, यह मैं अच्छी तरह नानता हूं। चोग आपके परोकारकी खुत्री संमझें या न समझे इसकी आपको परवा नहीं, पर इस अश्रदासे उन विचारोंका बहुत अहित होता है। वे किसी काममें नरामे विवके आजानेपर माग जावे हैं-हिम्पव हार जाते हैं। जो उन्हें सबर हो, श्रद्धा हो-अविचन श्रद्धा हो-कि वाप शामनके नायक, देवाविदेव, प्रकाशित सूर्य बेंडे हुए हैं तो किर हम आपके पुत्र शुमकामनाओंको किस छिए पीछी रहने दें ! किस छिर पूर्ण मन और पूर्ण बल्से आगे नहीं बढ़ते ! पहुंगा छड-स्टडाऊंगा तो हायके पकडनेवाळे सहारा देनेवाळे पितामी पास ही खंडे हैं ऐसी श्रद्धा हो तो बाङ्क कैसे चङ्ना न सीले ! पर क्या किया जाय ! आपके स्थापित किए हुए नेताओं में ही ऑपके अस्तित्व- की श्रद्धा नष्ट हुई दिखाई पडती है। वे ही राजाका अनादर करेंके राजग्रहीको पचा गये है तो फिर उनपर विश्वास रखने वालेंमें वैसी श्रद्धा कैसे संभव हो सकती है ?

हे नाथ! यह मेरी प्रार्थना मेरे छिए नहीं । आपकी सेवार्सपी अमृतफलके सिवा मुझे किसी वस्तुकी परवा नहीं । पर चारों ओर ज़क हिंछ दौड़ाता हूं तब मुझे सचमुच बड़ा भारी खेद होता है—मेरा हिंदय द्रवित हो उठता है और इस समय क्या करना चाहिए इसकी सूम न पड़नेसे सब हिम्मत हार जाता हूं—अधीर हो उठता हूं।

हे रक्षक! आप यह अच्छी तरह जानते हो कि इस धर्मके तीन प्रधान भाग होगये है। परन्तु जब उनके भी अन्तर विमार्गोपर विचार किया जाता है तब आखोंमें आमूं आये विना नहीं रहते। इन अन्तर विभागोंने तो इस धर्मके सत्यरूपी शरीरका चूर चूर कर डाला है।

अब ऐसा अमृतफल अथवा संजीवन औपि कहांसे लाई जाय कि जिससे फिर भी यह शरीर अपनी असली दशा प्राप्त कर सके ! कियाओं में से चैतन्य चल बसा है। अब वे खाली खोखलासी हो गई हैं। सूत्र केवल तोतेकी मांति मुखसे उच्चारण किया जाता है। उसके अर्थ करनेवाले भी उसका ठीक ठीक अर्थ समझते होंगे यह नहीं जान पडता। अब तो टीका करनेवाले, शब्दको तोड मरोडकर उसकी न्युतपात्ति करनेवाले और शब्दके खोखलोंको चूंथनेवाले ही पण्डित बहुधा दीख पडते हैं। वे विद्वान वे तत्वज्ञ तो बहुत ही विरले हैं जो निभयता और निःस्वार्थताके साथ वस्तुका वास्तविक विवेचन करते हों। इन स्वार्थियोंकी लिलासे शब्दकी गंभरिता और

उनके जीवनको समझाने वाछी कुंजी तो कमीकी छोप हो। गई है 1 हे प्रभो ! अत्र इस कुंनीका जाननेवाला कोई दिखाई नहीं पडता । इन मेदोंको समझाने वाला कोई नहीं मिलता और इसीसे यह बात प्राप्तिद्ध की गई कि इस कालमें पूर्वका ज्ञान नष्ट हो गया है, मन पर्येय ज्ञान किसीको नहीं होता, कोई अपने पूर्व भव नहीं मान सकेता। अन तो केवल शास्त्रका मनमाना अर्थ करनेवाले ही रह गर्ये हैं । हो । कैसी खेदजनक स्थिति ? नाय! जब सब ही नष्ट हो गया तत्र आप ही कैसे वचे ! क्या आत्मापर-आत्माकी अनन्त शक्तियोंपर क्षुद्र देश काल असर कर सकते हैं ' क्या कालके ऊपर किसीका भी साम्राज्य नहीं चर्ल सकता ! यदि नहीं ही बेल सकता तो है नायं ! सबके महाण करनेवाले कालका भी आपने कैसे काल कर दिया ? जनतक आप विद्यमान हैं-जन तैक देश कालते अपरिष्ठित्र आत्मशक्तिवाले आप संरीखे महात्मा मौजूद हैं-तवतक आपका प्राप्त किया हुआ पद यह मनुष्य अपनी सेवा द्वारा प्राप्त कर सकता है, ऐसी मुझे पूर्ण श्रद्धा है। इस श्रद्धाको मले ही कोई नास्तिकताकी उपाधि प्रदान करे पर मेरे हृदयमेंसे यह श्रद्धां कभी नहीं खिंसकनेकी है। महाराज ! यह कैसे ही सकता है कि आत्माका स्वामाविक गुण नष्ट हो जाय है फिर ज्ञान, अयवा पूर्व, नो ज्ञानको छोडकर पित्र कुछ नहीं हैं, कैसे नष्ट हो सकता है । और जब आत्माकी प्रधान शक्ति ही नष्ट हो जायगी तब बचेगा ही क्या व देखिये ती-भावस्य र्णात्य गासो गत्थि अभावस्स चेव उप्पादो अर्थात् सत्का विनाश और असत्का उत्पाद कंभी नहीं होता और यदि ऐसा ही होने

हों। तो बड़ा भारी दोष आकर उपस्थित होता है। आपके ही अलण्डिसिद्धान्तमें वाघा उपस्थित होती है। इस छिए नहांतक में समझा हूं कह सकर्त हूं न तो ज्ञान नष्ट हुआ है और न पूर्व ही। उसी तरह न ज्ञानी ही नष्ट होगये है। जो मनुष्य ऐसा मानते हैं उनके छिए तो सचमुच ही सब नष्ट होगया है, यह मैं अवश्य मानता हूं। आत्माकी अनन्तशक्तिमें, अनन्तबर्छमं—अनन्तवीर्थमें निसे अतीति—विश्वास—श्रद्धा—नहीं है उसके छिए तो सब कुछ नष्ट होगया है, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है। पर सबके छिए सब नष्ट होगया है यह नहीं माना जा सकता। यह केवल करपना है।

जो मनुष्य यह मानता है कि यह वस्तु कभी मिलेगी ही नहीं उसे तो वह कभी नहीं मिलेगी नयोंकि यह कहावत प्रसिद्ध है कि रोता जाय और मरेकी खबर रेकर आवे ।

हे अथमोद्धारक । इसमें यदि मेरी मूछ हो तो उसे मुझे समझा-इये । पर इस विषयमें तो मेरा अन्तःकरण उपरके विचारोंसे ही सहमत होता है । और फिर भी यदि मूछ हो तो फायदेकी ओर दृष्टि रखनेवालेकी मूछ होती ही है । इस लिये चिन्ताकी कुछ बात नहीं। हे प्रमो ! लिखनेके लिए तो बहुत कुछ है, पर वह आपपर अविदित नहीं है । यह सब आप जानते हुए भी मौन साथे हुए है । इसी-लिए मुझे लिखना पढा है ।

हे मगवन् ! मैं अज्ञानी हूं—बालक हूं—छद्यस्थ हूं । इस लिए मेरे लिखनेमें बडे भारी अविनयके होनेकी संभावना है । बालककी तरह बोलनेमें भी वाचाल होनेका भय बना हुआ रहता है । इस लिए आप उस तरफ लक्ष न देकर मेरे त्हदयके मार्वोकी ओर दृष्टि क- रना। हे नाथ! जैसी स्थिति अब है उसे बहुत समयतक रहने देना यह सारे धर्मका नाश करना है। इस छिए आप, रक्षा करनेवाछे अपने हाथोंको अब चलाइये—उनसे काम लीनिए। अपनी सत्यवाणी-रूप अमृतका हमें पान कराइये। हमारी आर्खोका पटल दूर की-जिए। अज्ञानके समुद्रमें गोता खानेवाले हमारे माइयो—अपने बा-लकोंपर कृपादृष्टि कीनिए। इस भरतमें—इस हृदयमन्दिरमें पधा-रनेके लिए हमारी प्रार्थना स्वीकार कीनिए।

हमारे कर्त्तव्यकी समाप्ति।

हम नैनी है। हमें अपने नैनी होनेका बड़ा अभिमान है। हमसे कोई पूछता है कि तुम कौन हो ? तन उसे हम बड़े गर्व- के साथ उत्तर देते है कि हम जैनी हैं। पूछनेवाछा नब हमसे हमारे धर्मके समझनेकी इच्छा प्रगट करता है तन हम उसे समझाते है कि हमारा धर्म बडा पिनत्र है, ससारमें हमारे धर्मके बराबर पित्र और आत्मकल्याणका मार्ग वतानेवाछा कोई दूसरा धर्म नहीं है। उसमें कहा गया है कि कभी पापकर्म मत करो, संसारके छोटे और बडे सन जिनोंके साथ मित्रता करो, कभी किसी जीवकी हिंसा मत करो, हिंसा तो दूर रहे, कभी उन्हें छोटीसे छोटी मी तकछीफ न पहुंचाओ, जिस तरह हो सके, जितना हो सके, दूसरों का उपकार करो। किसीका, चाहे वह फिर तुम्हारा जानी दुश्मन भी क्यों न हो, अनिष्ट-अपकार-मत करो, न करना तो दूर रहे, पर कभी अपने मार्नोमें भी किसीके नुराईकी भावना-विचार- न करो। राग, द्वेष, कोध, मान, माया और छोम ये आत्माके जानी

दुश्मन है—उसे कुगतिमें भ्रमण करानेवाले हैं। इनके वश अपने आत्माकी कभी न होने दो और इन्द्रियोंके विषयोंमें कभी आसिक मैत करों। आदि। इतने कहनेका सार थोडेमें यह कहा जा सकता है कि आत्माको सदा पवित्र रक्खों और पवित्र काम करों। यहीं कल्याणका मार्ग है—आत्माके सुधारका उपाय है। आत्माके पवित्र रक्खे विना कोई काम लाभदायक नहीं हो सकता। इत्यादि। यहीं नैनमतका सार और असली उद्देश्य है। ये बातें पूलनेवालेकों हम सुना जाते हैं और पीछे बहुत कुछ अपनी तारीफके देर लगा देते है।

इसमें सन्देह नहीं कि ये सब बातें सही है और इसपर चलने-बालेका बहुत कुछ हितसाधन हो सकता है। हम यह भी कह सकते हैं कि यद्यपि कितनी बातें इनमें ऐसी भी हैं जो सर्व साधारण मतीमें पाई जाती है। परन्तु कितनी बातें ऐसी है जो जैनमतके सिवा कहीं विश्वदरीतिसे नहीं मिल्लीं। जैसे अहिंसा। अहिंसाका सब मतमें विधान है, इसमें सन्देह नहीं। पर जैनमतमें मानी हुई अहिंसा-के साथ अन्यमतमें मानी हुई अहिंसाकी तुलना करनेसे जमीन आश्मानकां अन्तर दीख पडेगा। अस्तु। जैनमत कल्याणका मार्ग है सही। पर इससे हम भी कुछ लाम उठाते है—उसके उद्देश्य पर चलते हैं या नहीं? इसका विचार करना जरूरी है। हमारा यह गर्व कि जैनमत बहुत उत्तम धर्म है, हमारे लिए भी कुछ काम आता है या नहीं? या केवल दूसरोंको समझानेके लिए ही हम इतनी बातोंका सिलिएत बांध देते हैं?

मुंमे नहांतक अपने माइयोंकी अवस्थाका परिज्ञान हुआ है, नेहांतक भेने उनके कर्तव्यकी समाप्तिपर छन्य दिया हैं, उससे मैं यह निःसन्देह कह मक्ता हूं कि उनका यह अभिगान-यह अपने धर्मकी उत्तमता बदलाना—केवल दूसराँके लिए हैं। हॅर्जोरोंमें शायद ही कोई एक ऐसा निक्लेगा जो स्वयं भी इन वार्तों-पर चलनेके लिए कटिवद्ध रहता हो । हमारे माडयोंके कर्तव्यकी संमाप्ति वो वस इतनेहीमें हो नाती है कि वे दिनमें एक वक्त मन्दिरमें नाकर दर्शन कर आते हैं। वे दर्शन करते हैं अवस्य, पर किस डिर्? पुण्य सम्यादनके डिए। उनके हृद्यमें यह विश्वास है कि दर्शन करना पुण्यका कारण है। पर वे यह नहीं जानते कि हॅमारें ऋषियाने किस छिए प्रतिमाका दर्शन करना नवछाया है ? इस वातका उन्हें स्वप्नमें भी खयाछ नहीं होता कि हम निनके दर्शन करते है वे अपने अपूर्व गुणोंसे संसारके आदर्श हुए हैं। उन्होंने उसके हितकेटिए सतत प्रयनकर उसे कल्याणका पय प्रद-र्शन कराया है, - नीवमात्रका उपकार करनेके छिए कठिनसे कठिन दु.ख उटाया है और अन्तमें कर्मोंका नाश कर अपने आत्माको अनर अमर वना छिया है। उनके ये गुण हमें भी प्राप्त करनेकी कोशिश करनी चाहिए । अपने आत्माको उन आवशैकि प्यपर लगाकर उसे पवित्र बनाना चाहिए । संसारके दुःखी जीवाँका-अपने माइयोंका हमें उपकार करना चाहिए । आदि । हमारा इस वातपर विरक्तुर्छ छद्य नहीं । हम तो दर्शन करनेका केवल इतना ही मतल्य स्मझें हुए हैं कि उससे पुण्यवन्य होकर हमें स्वर्गकी प्राप्ति होगी।हमें इसकी जेव्हरत नहीं कि हम दूसरोंके उपकारके टिए उपाय करें।

ऋमारा कर्त्तव्य समझिए, परोपकार करना समझिये, अपने धर्मपर चलना समिझिये या पुण्यकर्म समिझिये, जो कुछ समिझिये वह केवल -इतना ही कि प्रातःकाल एक वक्त भगवान्के दर्शन कर आना है। दर्शनभी कैसा! चाहे उस वक्त हमारे भावों में पवित्रता न हो, चाहे हमारा उपयोग उस वक्त कहीं अन्यत्र छगा हो, चाहे न्हिष्ट पापवासनाकी तरफ झुकी हो, चाहे हम भारीसे भारी आकुल्पित अवस्थामें हों, चाहे हम मन्दिरकी रमणीय वस्तुओंके अवलोकनमें अपने उपयोगको लगा देते हों और ऐसे समयमें चाहे फिर हमे पुण्य नन्ध भी नहो।परन्तु इन बातोंकी हमें कुछ परवा नहीं। हम तो दर्शन कर ओनेको ही सब कुछ समझते हैं। हमें इस विचारकी नरूरत नहीं कि दर्शन करनेके अतिरिक्त भी कुछ हमारा कर्त्तव्य है। इसमें सन्देह नहीं कि मगवानका दर्शन करना उत्तम न हो। उत्तम है और अवस्य कर्त्तव्य है । पर विचारके साथ । महर्षियोंने दर्शन करनेका केवल इतना ही आशय रक्खा है कि भगवानको देखकर हम उनके अपूर्व परोपकारता आदि गुणोंका स्मरण करें और फिर उनके अनु--सार अपनेको भी उन गुणोंका पात्र बनावें । दर्शन करनेका अभिप्राय जो केवंछ इतना ही समझे हुए है कि उससे पुण्यवन्व होता है और इसी लिए वे दर्शन करते हैं तो वे मूल करते हैं। किसी तर--इकी आशासे धर्मकाम करना इस विषयमें हमारे ऋषियोंकी सहानुभूति -नहीं है। वे उसे अच्छा नहीं समझते। हमें परमात्माके दर्शनसे उनके -गुण प्राप्त करने चाहिएं। हमें यह लिखते हुए अत्यन्त दुःख होता है र्यंके हम अपने मनुष्य जन्म और जैनधर्मके प्राप्त करनेकी समाप्ति ें केवछ परमात्माके दर्शनसे—देखनेसे—समझ बैठे हैं । हमें अपने

ऋषियोंके कर्त्तव्योंपर कुछ भी विचार नहीं आता कि उन्होंने अपने जीवनको कैसे कार्मोर्मे लगाया था । हमारी आंखोंके सामने ऐसे अनेक आदर्श उदाहरण विद्यमान है जिनसे कि हमारे पूर्व पुरुपोंकी उदारता और परोपकारताका पूर्ण पता लगता है।उन्होंने अपनी नातिके लिए-अपने भाइयोंके लिए-अपने जीवनतककी कुछ परवा नहीं की थी। पर आन तो हमारे देश और नातिके भाइयोंकी बहुत पतितावस्था है तव भी हमें कुछ नहीं सूसता । उनके दु. खपर विल्कुछ दया नहीं आती । हम जानते है कि नैनधमका उद्देश्य जीवमात्रपर दया करनेका--उनके दुःखर्मे सहायता देनेका-है, पर वह केवछ हमारे छिए कथन मात्र है। उसपर चलना यह हमारे छिए कुछ आव-इयक नहीं । हम दूसरोंको समझवेंगे तव नैनधर्मकी वेशक खुब नी जानसे तारीफ करेंगे पर उसपर हम भी चलते है या नहीं इसका कभी निचार भी नहीं करेंगे । हम दूसरोंको कहते हैं कि हमारा घर्म बडा ही द्यामय है, पर हममें कितनी द्या है उसका कुछ जिकर नहीं । हमारा घर्म संसारमात्रका कल्याण करनेवाला है, पर उसे पाकर हमने भी कुछ अपना कल्याण किया है या नहीं ह हमारे धर्ममें बढ़े बड़े आदर्श और परोपकारी पुरुष होग्ये है, पर हमर्मे भी कुछ उपकारवृद्धि है या नहीं ! हमारे धर्ममें पापकर्मके न करनेपर खूत्र और दिया गया है, पर हम दिनरात जो हिंसा, मूंठ, चौरी, मायाचार, दगावानी करते हैं, जहातक वनप-हता है दूसरोंको तकछीक पहुचा कर अन्याय—अनर्थ—करते हैं, अपने ही भाइयोंके साथ नहीं करनेका काम करते है, वुरेसे बुरे और नीचसे नीच कांग करनेसे भी हम वाज नहीं आते हैं,

छोगोंको धाला देकर ठगते हैं, विश्वास देकर उसका कर डालते है, सी्धे साधे और भाले भाले मनुष्यको अपने नालमें फंसाकर उसपर आपत्तिका पहाड दहा देते हैं, नोंगसे धर्मात्मा वनकर छोगोंको अपने पञ्जेमें कोशिश करते है, एक एक पैसेके लिए हनारी झूठी प्रतिज्ञा कर डाछते है, गरीबोंको तकछीफ देनेगें कुछ कसर नहीं रखते है, दिनमें हजारों बार झूठ बोछते है, चोरी करते हैं, ऊपरसे अहिंसा-के माननेका ढोंग वनाकर भीतर ही भीतर मायाचार—छल—कपटके द्धारा लोगोंपर बुरी तरह वारकरके उनको दीन दुनियासे खो देते है, अपनी माता और वहनोंपर बुरी निगाह ,डालनेमें हमें लजा नहीं आती है, हम भगवानके द्रीन करनेका बहाना बनाकर वहा माता वहनोंके पवित्र दर्शन क्रते हैं, करते हैं भगवानकी पूजन, पर हमारा ध्यान रूपकी हाटके देखनेमें लगा रहता है, हम मन्दिरों— को धर्मायतन कहते हैं पर वहां पाप करनेमें कुछ छजित नहीं द्दोते, हम छोगों पर यह नाहिर करते हैं कि हम बड़े धर्मात्मा है प्र उसकी आड्में हम चरम दर्जेका अन्याय करनेसे नहीं हिचकते, हम अभिमान करते है, पर अभिमान कैसा ! जिससे जाति और देश घुळमें मिळ नाय, हम निर्वर्ळी पर अत्याचार करते हैं पर उसे नुरा नहीं समझते, आदि, महापापसे वचनेका कुछ प्रयत्न करते हैं या नहीं ! हमारा धर्म सब जीवींके साथ मित्रताका उपदेश देता हैं, पर हम भी किसीके साथ मित्रता करते हैं या नहीं ! राग़, द्वेष कोध, मान, माया, लोम, ये आत्माके पूर्ण शत्रु कहे गये हैं पर इनसे हम भी अपनी रक्षा करते हैं या नहीं ? अपने आत्माको सदा पिनन

रक्लो और पिनत्र काम करो, पर हम अपनेको कुछ पिनत्र करने-की अथवा पिनत्र कामके करनेकी कोशिश करते हैं या नहीं ! इन बातोंपर क्या कभी हमारा ध्यान जाता है ! कभी विनेक्नुद्धिका विकाश होता है ! मै कहूंगा, कभी नहीं । क्योंकि हमने तो अपने कर्त्तव्यकी समाप्ति केवल सुबह दोचार मिनटके लिए मिन्दरमें जाकर परमात्माकी मूर्त्तिका निरीक्षण करने मात्रसे समझ रक्ली है न ! फिर क्यों हमें इन वातोंपर विचार हो ! क्यों हम अपनेको अधिक कप्टके गहुंमें डालें ! देश या जाति कल रसातलमें पहुचते हो तो ये हमारी ओरसे आज ही पहुंच जायें । हमे क्या करूरत नो हम दूसरोंकी बला अपने शिरपर उठानें ! हाय ! समयकी बलिहारी है ! नहीं तो क्यों आज हम लोगोंमें इतनी संकीण बुद्धि और अन्याझ-परता होती ! हमारे पूर्वजोंने ससारके हितके लिए कोई काम करना बाकी नहीं रक्ला था । पर हमें सब कण्टकसे दिखाई पढ़ते हैं ।

पाठक! आप विचारके साथ अपनी दृष्टिको दूर तक फैला कर देखेंगे तो आपको ज्ञात होगा कि हमारे भाइयोंकी कैसी भयानक पिरिस्थिति है। उनका कर्त्तन्य तो कितना था और वे क्या समझे हुए बैठे हैं। क्या उनकी इस भूलका कुछ ठिकाना है! क्या कभी वह पवित्र दिन आवेगा जब कि हमारे भाई अपनी इस भूलको जानकर सारे संसारके हितका उपाय करेंगे! परमात्मा! द्यासिन्धु!! उन्हें सुबुद्धि प्रदान कीनिए। निससे कि वे अपने कर्त्तन्यको समझें और उसीके अनुसार चलनेके लिए कार्यक्षेत्रमें निभय होकर कूद परें।

मोले भाइयो ! अत्र अपनी इस मोलपनको छोडो । इस मोलप-नसे-इस इदयकी अनुदारतासे-हम बहुत पतित हो जुके हैं। हमें अपने कर्त्तन्यका ज्ञान नहीं रहा है। आप जो अपने हृद्यमें यह निध्वय किये हुए वैठे हो कि परमात्माके दर्शन करनेसे ही हमारे कर्तन्य की समाप्ति हो नाती है यह आपकी नितान्त मूछ है। मैं कहुंगा कि संसारके बुराई मछाईकी जितनी जवाबदारी आपपर है उतनी किसी पर नहीं है। क्योंकि यह आपहीके धर्मका पवित्र सिद्धान्त है कि 'सत्वेषु मैत्री' अर्थात् नीवमात्रपर प्रेम करो । और आपके तीर्थकरोंने भी सारे संसारके छिए कल्याणका मार्ग नताया है। फिर आप हा कहें कि जो सारे संसारको अपना समझकर उसे कस्याणके मार्गपर छाना चाहता है तत्र उसे उसके हित वा अहि-तका जवाबदार होना पडेगा या नहीं 2 अपनी गहरी भूछको छोडो और संसारमात्रके हितमें छगों, यही हमारी आपसे प्रार्थना है } आपके छिए अभी बहुत कुछ करना नाकी है । इसछिए केवल पर-मात्माके दर्शनसेही अपने कर्तव्य समाप्ति मत समझो ।

कञ्चन ।

(सामाजिक आख्यायिका)

(8)

कामवासना ।

रातके एक वजेका समय है। प्रकृति विल्कुल निस्तव्य है। सारा बहर निड़ा देवीकी गोदमें मुखकी नीद सोया हुआ है। पूनमचन्द्र जिम मकानमें रहते हैं उममे कुल ही दूरपर एक वेदयाका घर है। इस समय इस निस्तव्यतामें भी कमला मधुर और मनोहर गाना गा रही है। गाना बहुत उत्तम है। उसके सुननेवालका चित्त बहुत जल्डी उमकी और आकर्षित हो जाता है। यदि हम इस गानेका गवर्वगानके साथ मिलान करें तो संभव नहीं कि वह उससे किमी अंगमें कम हो।

गाना अपनी प्रतिष्विनिसे आस पामके गृहोंमें गृंजता हुआ ह्वामें हीन हो जाता था। पूनपचन्ड मोते थे। एका एक गानिकी मनोहारिणी आवानने उनकी नीड़में बाबा डाइ दी। वे जग उटे। उनका ध्यान गानिकी ओर खिंचा। उमकी सुन्द्रग्ताने उन्हें अवीर बना दिया। निद्रा हेना अब उन्हें कटिन होगया।

उनकी खींको मरे आन तीन वर्ष हुए हैं, पर इस समय उनका जोक निक्कुल ताजामा दीख़ पड़ता है। जान पडता है गाना सुनकर उन्हें उनकी ख़ींकी याद हो उठी है और इसीसे वे एक साय इतने अवीर होगये है। आज उन्हें छलनाप्रेमने फिर घर द्वाया है। जैसे जैसे समय अधिक अधिक वीतता है वैसे वैसे उनकी उत्कण्ठा प्रवल हो रही है। उसके पूरी करनेका उनके पास कुछ साधन नहीं दृखि पड़ता। इससे उनके मनोविकार और भी भयंकरता धारण कर रहे हैं।

वृद्धावस्थामें यद्यपि इद्रियां शिथिल हो जाती हे, उनमें किसी-तरहकी स्फूर्ति नहीं रहती । पर इसमें भी कोई सन्देह नहीं कि वृद्धावस्थाके मनोविकार पहलेसे भी कहीं अधिक उत्तेजित हो जाते हैं। युवा पुरुष यदि हिम्मत करे तो उन्हें द्वा सकता है, पर वृद्ध पुरुषकी यह ताकत नहीं कि वह अपने हृद्यके उदीप्त विकारोंका दमन कर सके।

पूनमचन्द्र भी वृद्ध है, पर आजके गानेने, जो कि उनकी स्त्रींके मधुर स्वरसे मिछता हुआ था, उन्हें विकल कर दिया। इस दलती उमरमें आज फिर उन्हें अपने विवाहका ध्यान आया। उनके हृद्यमें बुरे मले विचारोंका बड़ा भारी घमासान युद्ध मचा। वे कभी तो जाति वा लोक लजाके भयसे विवाहके विचारको रद्द कर डालते थे और जैसे ही उन्हें उस मुन्दर गानेकी आवाजका ध्यान आता तब फिर विवाहके लिए उपार हो उटते थे। बहुत तर्क वितर्कके बाद उन्होंने निश्चय कर लिया कि जो कुल हो विवाह करना और अवज्य करना। फिर चाहे लोग बुरा ही कहें श कहांतक वे बुरा कहेंग १ एक दिन, दो दिन, दका दिन, महीना, दो महीना, वर्ष दो वर्ष। आखिर तो उसकी भी संत्रा है। और फिर उससे मेरा विगडेगा ही क्या १ एकके कामको एक बुरा कहता है और एक भला। पर इस भयसे क्या अपना विचार छोड देना चाहिये १ नहीं। हा संभव है जातिके लोग

कुछ गडबढ करें। पर वे भी एक वक्तके भोजनसे ठण्डे किये जा सकते हैं। फिर क्यों मै अपना विचार बदछूं।

विवाहमें रुपया बहुत कुछ खर्च करना पढेगा। अस्तु। इसकी कुछ परवा नहीं। हनार, दो हनार, चार हनार, दश हनार भी क्योंन खर्च हो नायँ, करूगा। पर विवाह करना कभी नहीं छोडूगा। रूपया तो मैने अपने आरामके लिए ही कमाया है। फिर जब उनसे मैं ही छाभ नहीं उठाउँगा तब क्या मैंने यह मजूरी दूसरेके ही लिए की है। वे बड़े मूर्व हैं जो पास पैसा होते हुए भी आनन्दोपभोगसे विज्वत रहते है। मुझे यह मञ्जूर नहीं। मैं अपने पैसाका उपभोग करूंगा। लोग कहते हैं कि बृद्धावस्थामें विवाह करना बुरा है, पर यह उनकी भूल है। वे अपने स्वार्थकी और देखते तो कभी ऐसा नहीं कहते। अपना भला सब चाहते हैं फिर में ही क्यों दु स देखूं।

प्नमचन्द्रेन अपनी नुरी वासनाके वन हो नुराई भटाईकी ओर कुछ भी ध्यान नहीं दिया। जातिकी और लोक लजाकी, कुछ परवा न रक्खी। मचमुच जब मनुष्य कामके पानमें बद्ध हो जाता है तब उसे अपनी, अपनी जातिकी, और अपने देशकी हानि लाभका कुछ विचार नहीं होता है। हो कहां से, जब कुछ विवेक नुद्धि हो तब ही न! सो उनकी विवेकनुद्धिकों तो काम पहले ही हर लेता है।

पूनमचन्टका अभी एक बलासे तो पिण्ड छूटा ही नहीं है कि एक और वला स्वयं उन्होंने अपने ऊपर उठाली है। अभी उन्हें अपने सुपुत्र मोतीलालका विवाह करना तो वाकी ही है। उसके लिए ही उन्हें कितनी दौड घूप करनी पढ़ी है। फिर न नाने अपने लिए वे क्या करेंगे ! मनुष्य अपने स्वार्थके पीछे सत्र कुछ भूछ जाता है। इसमें कुछ सन्देह नहीं । ठीक यही हाल पूनमचन्दका हुआ है । आइये पाठक! हम और आप भी पूनमचन्देक विवाहका तमाशा देखें।

(9)

विपत्ति ।

मोतीलालका विवाह हुए आज दो वर्ष वीत गये, पर उसने आजतक अपनी ख़ीके साय कभी प्रेम संभाषण नहीं किया । हम
उसके चालचलनका हाल पहले लिख चुके हैं । पाठक जान सकेंगे कि
जिसका हृद्य किसी दूसरेके वग है, वा वह स्वयं अपनेको दूसरेके
लिए सीप चुका है, फिर उसे अपने घरकी कुछ खबर नहीं रहती ।
उसे अपनी सुन्दर और सुखद वस्तु भी वुरी जान पड़ती है । आपने
यदि यशोधर महाराजकी जीवनी पड़ी है तो आपको अमृतमनीकी
कथा इसके लिए उत्तम आद्री जान पड़ेगी । मोतीलाल अपने हृदयको दूसरेके लिए सीप चुका है । अन वह कञ्चनपर केंसे प्रेम
कर सकता है ? वेचारी कञ्चन चाहती है कि मे एक वक्त अपने प्राणप्योरेसे इस बातका कारण समझू कि वे मुझसे क्यों नाराज है ?
पर मोतीलाल उसे इतना अवसर भी नहीं देता । उसके हंगोटिये
यार और उसे दिनरात बुरी बातें सुझाया करते है, जिससे वह
और भी निर्द्यता घारण किये जाता है ।

बेचारी कञ्चन नैसे नैसे वडी होती नाती है वैसे वैसे चिन्ता और मानसीक विकारोंकी ज्वालासे उसका हृदय नला नाता है। वह चाहे दिरद्र और स्वार्थीके घरमें मछे ही उत्पन्न हुई हो, पर उसमें कुछीनता है। वह अपने कुछकी मर्यादा रखना जानती है। इसिछए वह दु:ख भोगती है पर उसकी परवा नहीं करती। सचमुच उसमें शिक्षाकी सुगन्धने उसके कश्चन नामको सार्थक कर सोने और सुगन्धकी कहाबतको चिरतार्थ करदी है।

जन उसे अपने पिताकी स्वार्थताका ध्यान आता है तव उसका हृद्य—कोमल हृद्य—फटने लगता है। कभी कभी तो उसकी हालत यहातक विगड जाती है कि उसे खाना पीनातक जहर हो नाता है। उसे रोनेके सिवा कुछ सुमता ही नहीं। कभी वह अपने बुरे कर्मको धिक्कारती है, कभी परमेश्वरसे प्रार्थना करती है, पर उसे किसी तरह शान्ति नहीं मिलती—उसका दु:ख कम न होकर वढ़ने ही लगता है।

हम केवल कञ्चनहीकी हालत क्यों कहें 2 आन तो हमारी जातिभरकी यही हालत हो रही है। वह न गुणोंका विचार करती है, न बुद्धिपर ध्यान देती है, न चालचलन पर खयाल करती है और न अवस्थाकी मीमासा करती है। तब करती है क्या 2 केवल पैसा देखकर फिर वह चाहे मूर्ख हो, कुरूप हो, वृद्ध हो, वालक हो अथवा बीमार हो उसके साथ अपनी प्यारी पुत्रिया विवाह देती है। यों कहो कि उन्हें नरकयातना भोगनेके लिए ऐसोंके गले लटका देती है।

इन दुराचरणोंसे हमारी जातिका दिनों दिन भयंकर ऱ्हास हो रहा है और अभी होगा | क्योंकि अभी इन दुराचारोंके रोकनेका कुछ,भी उपाय नहीं किया जाता है । कश्चन-कोमलहृद्या कञ्चन-दुली है-वहुत दुली है। उसे अ-पना जीवनतक भी भारता प्रतीति होता है। उसे आशा नहीं कि अब कभी मुझे प्रियतमके साथ सुखसंभाषणका अवसर मिलेगा। वह मारे लजाके अपनी मनोवेदनाओंको दूसरोंपर भी जाहिर नहीं कर सकती। उसे इस वातका अधिकार भी तो नहीं है। कज्चन! तू अभागिनी है। तेरा पापकर्म बहुत तीव्र है। इसी लिए तेरे भाग्यमें सुख नहीं। तुझे आजतक अपने प्रियतमके साथ संभापण करनेका, सौभाग्य नहीं प्राप्त हुआ। अपने कियेका फल भोगना यही अव एक मात्र तेरे लिए शान्तिका उपाय हैं।

एक दिन कञ्चन बैठी हुई थी। कि मोतीलाल किसी कामके लिए उसकी कोठडीमें आया । कञ्चनने उठकर साहस पूर्वक उसका हाथ पकड लिया और वह कहने लगी कि—

प्राणनाथ! मुझ अभागिनी पर आप किस लिए नाराज है ? भैने आपका ऐसा कौनसा भारी अपराध किया है जिससे भे- आपकी कृपापात्री आजतक नहीं हुई ? मुझे समझाइये । मुझे दुःख देखते देखते वर्षके वपं बीत गये पर आपने मेरे दुःखंकी कुछ भी वात नहीं पूछी ? वतलाइये तो पितको छोड़कर स्त्रीका और कौन आधार हो सकता है! वह किसंके पासं जाकर अपनी दुःख कहानी सुना सकती है!

मोतीलल-हाय छोडो । मुझे कामकी जल्दी है ।

कञ्चन—आप तो जरासी देरके लिए ही इतनी उतावल करने लग गये ? फिर मेरी हालत तो देखिये कि मै दिनरात चिन्ताकी ज्वालामें जहीं जाती हूं, उसकी भी आपको कुछ खबर है ? मेरी वार्तोका जबाब तो दीजिए कि आप मुझे क्यों नहीं चाहते ? विना कुछ अपराधके एक दीन अवलापर ऐसा घोर अत्याचार करना क्या आपको उचित नान पड्ता है?

मोतीलल-मुझे अभी इन सब वार्तोंके उत्तर देनेकी फुरसत नहीं है । इस समय मेरा हाथ छोड दो ।

कञ्चन—प्यारे! आप मुझे कुछ भी कहें पर जनतक आप मेरी नार्तोका उत्तर न देंगे तनतक मै आपको न जानें दूगी। मैने नहुत दुःख उठा छिये। अन मै नहीं सह सकती। आप देखते नहीं कि मेरी शारीरिक दशा कैसी निगड गई है १ पर फिर भी उसपर आपको दया नहीं आती।

मोतीलाल—तो क्या यह जनरदस्ती है जो मेरा हाथ छोडना के नहीं चाहतीं है छोड़ो । मुझे बहुत देरी होगई है । हा तुम्हारी बातोंका उत्तर फिर कभी दूगा।

कञ्चन—नाथ । आप यह क्या कहतें है १ मैं तो आपसे केवल प्रेमकी मिक्षा मांगती हूं। मुझे जवरदम्ती करके क्या करना है १ मै आपका हाथ छोडनेके लिए तैयार हूं। पर यह कह दीजिए कि मुझपर कृपा क्यों नहीं करते १ मुझसे क्या ऐसी भारी भूल वनपड़ी है १ वतलाइये मैं उसकी माफी मागू १

मोतीलाल—जान पडता है कि तुम विना उत्तर पाये मेरा हाथ न छोडोगी। आखिर होतो स्त्री ही न अस्तु। मुनो—मै तुम्हारी स्त्र वातोंका उत्तर देकर मामला तय किए देता हू । तुम मुझे चाहती हो—मुझपर प्रेम करती हो—यह सही है। पर मै तुम्हें नहीं चाहता। तुम पूछोगी, क्यों इसका मेरे पास कुछ जवाव नहीं है। तुम, कहोगी फिर विवाह किस लिए किया था इसका उत्तर पिताजी दे सकतें है। बस यही मेरा उत्तर है। अब इसपर जो तुम्हें उचित जान पड़े वह करो। पर मै तुमसे प्रेम नहीं करता।

सुनते ही वेचारी कञ्चनके शिरपर वज्रसा गिर पड़ा। उसका सारा शरीर सन्न होगया। वह मोतीलालका हाथ छोड़कर अलग होगई। उसका शिर घूमने लगा। दुःख और चिन्ताके आवेगसे वह अपनेको न सम्हाल सकी। वह एक दम घडामसे पृथ्वीपर गिर पड़ी। मोतीलालका पत्थर हृदय तब भी नहीं पसीजा। वह अवसर पाकर वहांसे चलता बना। मूर्खता! तुझे सो वार नमस्कार है।

()

विपात्तिपर विपात्ति ।

में बहुत दुःख उठा चुकी । अब मुझसे यह दारुण दशा नहीं मोगी जाती । परमात्मा ! मै अमागिनी हूं । अनाथिनी हूं । कमाँको मारी हुई हूं । मेरी रक्षा करो—मुझे बचाओ । विपत्तिके अथाह समुद्रमें वही जा रही हूं, मुझे सहारा दो । आपने पापीसे पापी और अधमसे अधमका उद्धार किया है फिर मेरा—दुःखिनीका-दुःख क्या दूर नहीं करोगे ! आपका स्मरण करके भी जब बहुतसे मुखी होगये है तब मुझे, जो दिन रात आपका ध्यान किया करती हूं, सुखी न करोगे ! मेरे प्यारेन मुझे छोड़दी है । पर क्यों ! यह मै नहीं जानती । आप मुझे बतलाइये कि मेरा क्या अपराध है ! क्योंकि आप सर्वज्ञ है । सबके जानने वाले है । फिर मैं उसका आयश्चित्त कर शुद्ध हो लूं । हाय ! सचमुच मै पापिनी हूं । मैने बहुत पाप किये हैं । इसीसे मुझे यह दुःख—भयंकर दुःख—मोगना पड़ा है ।

प्राणनाय ! यदिमें आपकी दृष्टिमें अपराधिनी ही हूं तो भी इतनी नुरा तो नहीं हूं कि आप मुझसे बोल्नेमें भी घृणा करें ? मुझसे एक वक्त तो प्रसन्न चित्त होकर आप संमापण कीनिए। में इंस्तेहीमें अपनेको सौभान्यवती समझ लूगी। केवल बोलन मात्रसे तो मै आपटा कुछ छीन नहीं छूंगी। मेरा जीवन-यह पापमय जीवन सफल हो जायगा । जीवनसर्वस्त । म हिन्दू कुल्में-पवित्र कुल्में-उत्पन्न हुई हूं। आप जानते है कि हिन्दू रेमणीरलेंका एक मात्र आराध्य देव उनका पति होता है। उसे छोडकर न तो कोई उसका आराच्य है और न जीवनमें सहारा देनेवाला है। आप मेरे प्राण है। इस भयंकर अवस्थामें मी जो मे इन पापी प्राणोंको चारण किये हुई हुं वह केवल आपके सहारेपर । भला । आप ही विचारें कि जब मुझे आप ही अपने चरणोंकी छायाका आश्रय न देगें तब और कौन मेरी रहा करेगा वनाथ । में आपकी एक दासी हूं । मुझपर दया करो । मुझे इस विपत्तिसे उत्रारो । म आपकी अपराधिनी हू तो मुझे क्षमा करो और मुझे रहनेको अपने हृदयमें जगह टो । प्यारे । क्या सचमुच आप मेरी प्रार्थना न सुनेंगे 2 मुझे सहारा देकर मेरी रक्षा न करेंगे ? मै हाथ जोडती हू। पार्वो मै पढती हू। मुझे बचाओ । मै केवल आपकी क्रपाकी भूखी हूं । मुझे धन दौलतकी कुछ जल्दरत नहीं । प्योर ! एक वक्त प्रसन्न होकर अपने श्रीमुखसे-सुन्दर मुलसे-नेाल लीनिए । मधुर हॅसी हॅस लीनिए । नस यही चाहती हूं। जीवनेश्वर । आप मुझे नहीं चाहते न सही पर प्रेमकी दृष्टिसे एक वक्त मेरी ओर निहार तो लिजिए। इतनेमें तो आपका कुछ नहीं निगढ नायगा । क्या विपत्तिकी मारी एक अभागिनीपर

इतनी भी दया करना आप बुरा समझते है। आपके हृदयमें इतनी मी उदारता नहीं है ! अस्तु । आप स्वतंत्र हैं । अपने हृदयके अधिकारी है। मेरा आपपर कुछ जोर नहीं। हिन्दू रमणियोंके छिए यही आज्ञा है कि वे पतिके कहनेको कभी नहीं टालें। मैं भी इसे पालूंगी । यदि इसमें मुझे और भी अधिक दुःख सहना पढे तो सहूंगी-जीवन देना पडे तो दृंगी। पर आज्ञाका-ऋषियोंकी अमेलिकं आज्ञाका--अवस्य पालन करूंगी । मै अवला हू फिर स्वतंत्र होकर प्रवला कैसे हो सकती हूं 2 आहा ! इस धर्मको धन्य है जिसे पालन कर अपना सर्वस्व खो बैठनेपर भी महिलागण उसके पालन करनेमें हिम्मत नहीं हारतीं। मेरा जन्म भी तो उसी कुलमें हुआ है। फिर क्या मै अपने इस तुच्छ और नश्वर जीवनमें उसे कलङ्कित करूंगी १ नहीं । आहा ! यह पवित्र कुल कितना समयीद है ! कितनी इनकी धर्मपर श्रद्धा--विश्वास-है 2 जो मुझ अवलाका साहस भी आन अलौकिक साहसके रूपमें परिणत हो गया है।

प्रेमके रत्नांकर! अच्छा, मेरी प्रार्थना न सुनो। क्योंिक मैं पापिनी हू। मै स्वयं नहीं चाहती कि मेरे द्वारा आपको पापका स्पर्श करना पड़े। अच्छा, सुखी रहिए। मै आपके सुखी रहनेकी ईश्वरसे प्रार्थना करूगी और हिन्दू स्त्रीके व्रतका पालन करूगी। हाँ। एक और प्रार्थना है वह यह कि आप मेरे अपराध क्षमा करना और सदा मुकहते कहते बेचारी कश्चनका गस्ना भर आया। वह आगे एक अक्षर भी मुँहसेन निकाल सकी।

(0)

भाग्य फूट गया।

पूनमचन्दने भी अपना विवाह कर लिया। उनकी स्त्रीका नाम तारा है। ताराकी अवस्था अभी कुल आठ वर्षके लगभग है। उसे किसी तरहका ज्ञान नहीं है। वह निरी वालिका है।

ज्येष्ठका महिना है। गर्मीकी प्रखरतासे पृथ्वी अग्निकी भाति भथक रही है। पशु पिसयोंकी भी हिम्मत नहीं कि वे अपने आवास स्थानसे वाहिर निकल सकें। इस समय पूनमचन्द जल्दी जल्दी पावोंकीं डग बढाते हुए घरकी ओर वढ़े हुए चले आते हैं। उनकी तिवयत गर्मीके आतापसे विगडी हुई दिखाई पडती है। वे आये और घरमें घुसे कि उन्हें उल्टी और उसीके साथ दस्त होना आरम होगया। घरके नोकर चाकर दौड धूप करने लगे। वैद्य ब्लाये गये। दवा दीगई पर परिणाम कुछ भी नहीं निकला अधिर उनकी जीवनलीला समाप्त होगई। वेचारी ताराके माग्यका तारा अस्त होगया। वह जन्मभरके लिए अनाथिनी होगई।

हाय! उसके साथ कैसा अनर्थ किया गया है कैसा राक्षसी कृत्य किया गया है जिसका उसे यह भयंकर फल भोगना पडा। अभीतक तो वह यह भी न जान पाई थी कि विवाह किसे कहते हैं है उसे यह भी नहीं मालूम था कि पूनमचन्द मेरे कौन होते हैं है पर हा इतना जरूर जानती थी कि वे बूढे है, मेरे घरपर दो चार वार आये है, वहीं जीमें है और वहीं रहे भी है। इस लिए माताके कोई रिश्तेदार होंगे, तभी माताने मुझे इनके साथ मेजदी है। वह कभी कभी तो पूनमचन्दको ऐसे ही सम्बोधनसे पुकार

भी छेती जिससे दूसरोंको यह जान पडता था कि यह पूनमचन्दकी बहन वैगेरहों किसीकी छडकी होगी। उस वक्त पूनमचन्द उसे शिक्षा देते कि प्रिये! तुम मुझे इस तरह मत पुकारा करो। मैं तो तुम्हारा स्वामी हूं—पति हूं—और तुम मेरी पत्नी—स्वी—हो। पर बेचारी तारा इस रहस्य को क्या जाने कि पति पत्नी किसे कहते हैं और उनका पारास्परिक क्या सम्बन्ध है ?

हाय ! भारत ! तेरी कैसी दशा विगडी है ? संभव नहीं कि ऐसी स्थितिका दूसरे देशोंको भी कभी सामना करना पडा होगा ? स्वार्थियोंने तुझे कितने गहरे गहेंमें डाल दिया है वह लिखना अर-कठिन है। जो तेरी सन्तान ब्रह्मचारिणी, बलिष्ठ और पूर्ण जिते न्द्रिय हुआ करती थी आज वही व्यभिचारिणी, निर्वल और इन्द्रि-योंकी दास होगई है । जो विवाह केवल वर और कन्याके सुखके हिये हुआ करता था आन उसका बिल्कुछ उल्टा परिणाम दीख पडता है । नव साठ साठ वर्षके बुढ़ेके साथ आठ आठ नौ नौ वर्षकी बालिकायें विवाह दी जाती है तव वह कैसे सुखका मूल हो सकता है ? अथवा जहां सोलह वर्ष-की कन्या और चौवीस वर्षके लडकेका विवाह हुआ करता था वहां वे अत्र वचपन और अबोध अवस्थाहीमें विवाह दिये जाते है। और फिर उनसे अपने वंशकी मर्यादाके सजीवित रखनेकी आ-शाकी जाती है पर यह संभव नहीं कि उनके द्वारा हमारा देश विष्ठ और कर्त्तन्य परायण हो सके ? अपक अवस्थामें वि-वाह हुए स्त्री पुरुषोंकी सन्तान वछवान नही होती और न उनके द्वारा कुछपरम्परा ही चल सकती है । न जाने ये कुरीतियां कव भारतका पिंड छोडेंगीं ? कव यहांसे अपना मुँह काला करेंगी है कव यह पतित भारत पीछा उन्नत होगा ? कव इसकी सन्तानके हृद्ययें ज्ञानका प्रकाश फैलेगा ? कव वे अपनी जन्मभूमिके उद्धारका उपाय करेंगे ?

भारतकी सन्तान ! उठो और अपने पिनत्र देशका उद्घार करो । देखों तो इन कुरीतियोंने तुम्हारी जन्मभूमिकी कैसी बुरी दशा कर डाछी है ? वेचारी तारा इसका उदाहरण है । क्या तुम्हें ऐसे घृणित व्यवहार और निर्देश अत्याचारोंको देखकर भी दशा नहीं आती ? तुम्हारा हृदय देशकी दुर्शशासे नहीं पसीजता । यदि सचमुच तुम्हारा हृदय इतना कठोर है—इतना निर्देशी है—तो मैं विश्वास करता हूं कि तुम्हारे समान कृतन्नी—परोपकारको भूछनेवाछा भी कोई नहीं हो सकता है ।

ताराके स्वामी पूनमचन्दकी जीवनछीछा पूर्ण होगई तब भी वह नहीं जानती कि मुझे किसी आपत्तिका सामाना करना पडा है। मुझ-पर वज्र आकर गिरा है। घरमें रोना मचा हुआ था पर उसके हद-यमें शोकका नाम निशान नहीं। आखेंामें आंसूकी बूंद नहीं। वह सदाकी भांति अब भी वैसी प्रसन्न है। पाठक ! सच तो है जब वह बेचारी इतनातक नहीं जानती कि विवाह किस चिडियाका नाम है? स्वामी और स्त्रीका क्या धर्म है और उनका क्या सम्बन्ध है ? तब वह क्या समझकर अपने पतिका शोक मनावे ? उसे छोग समझाते हैं कि तू विधवा हो गई है—अब तेरा पति जीवित नहीं है। पर वह जीवित नहीं है इसका यह अर्थ नहीं जानती कि मरा हुआ पिछा आता ही नहीं है। वह इन वार्तों को क्यों नहीं जानती इसका

यह उत्तर दिया ना सकता है कि अबोध दशाका धर्म अनिर्वार्य होता है"। तारा अबोध है—नालिका—है। इसीसे वह कुछ नहीं सममती। तारा! तू अभागिनी थी तब ही तो तेरी माताने छोमके नश होकर तुझे कालके हाथ सौंपी—तेरे गलेपर छुरी चलाई। अन तु जन्मपर ऐसी रहकर अपनी माताका—पिशाचिनी माताका—उपकार मानती रहना। पर तारा! तेरा भी एक दोष है—भयंकर अपराध है। वह यह कि तूने नौ महीने अपनी माताके पेटमें रहकर उसे वेहद दुःख दिया था। संभव है उसने तुझे उसीका प्रायश्चित्त दिया हो! उसे तूं भोग। इसमें सन्देह नहीं कि तेरा भाग्य तो अब जीवन मरके लिए फूट गया है।

(<)

आत्महत्या ।

कश्चन प्रयत्न करते करते हारगई। पर मोतीलाल किसी तरह सुपथ पर नहीं आया। अन्तमें उसे निराश होजाना पडा। मोतीलालने क्यों इतनी निर्देयता धारण की १ इसका कारण है। यह हम पहले लिख आये है कि मोतीलालका चाल चलन और स्वभाव अच्छा नहीं था। वह बुरी सङ्गतिमें पडकर लुचे और बदमाशों के हाथकी कठपुतली होगया था। उसे वे जितना नचाते थे वह उसी तरह नाचता असे स्वयंकी बुद्धि कुछ नहीं थी। मूर्खों के साथ खुशामदी दाल गल जाना कुछ आश्चर्यकी बात नहीं। ऐसे उदा-आज भी बहुत मिल सकते है।

मोतीलालको हृद्य पर किसी और भुवनमोहिनीकी प्रतिमा अङ्कित हो रही थी। वह उसे जी जानसे चाहता था। केसरने भी उस पर आपना प्रेमपारा ऐसा फैलाया था कि उसे कहींसे निकलनेको जगह न थी। उसने अपने मधुर मधुर संभाषणसे उसे अपनेपर मुग्ध कर रक्खा था। उसके खज्जगज्जन छोचनेंाने अपने कटाक्ष वाणींसे उसके ै हृदयको बहुत कमजोर कर दिया था। उसकी सुन्दरताकी मन मो-हनी छटाओंने उसके मनमें अपना पूर्ण अधिकार कर छिया था। फिर भला क्यों वह कञ्चनकी याद करे वक्यों अपने प्रेमरसको दो भाजनोंमें डालकर अपनेको उसका अपात्र बनावे र उसे दूसरे-की फिकरसे मतलब १ इस पर भी केशरने उससे यह कहेल-वा लिया था-स्त्रीकार करवा लिया था कि मै कभी अपनी स्त्रीके साथ प्रेमका परिचय न द्गा। मेरी जीवनेश्वरी तुम्ही हो। मैं सब तरह अपनेको तुम्हें सौपता हू। तुम्हें इस जीवनका सर्व अधिकार है । उसने ऐसा क्यों किया है इसके कहनेकी कुछ जरूरन नहीं । कामकी अपार महिमा कौन नहीं जानता।काम बडे बंड विद्वानोंसेभी अधमसे अधम काम करा छेता है तव मोतीछाछकी-मूर्व मेरती-छालकी क्या मजाल जो वह उसका अनादर कर सके।

कञ्चनका भाग्य इसी कुछकछिकनी केसरकी कृपासे फूट गया है। वह आज आदर्श दु खिनी होगई है। विना विचार कवछ धनके छोभमें आकर जो अपनी कन्याका विवाह ऐसे मूर्खके साथ कर देते है फिर उसकी जो हाछत होती है उसका कञ्चन आदर्श उदाहरण है। यह देख कर भी यदि हमारी जातिकी आखें न खुछे तो यही कहना चाहिए कि अभी उसके अध पतनमें बहुत कुछ वाकी है।

कञ्चन कहती है अब मुझसे यह वेदना नहीं सही जाती। मैने जितना कुछ सहा वह केवल एक पापिनी आशाके भरोसे पर । पर अब मुझे स्वप्नमें भी यह आशा नहीं होती कि मुझे कभी प्राण-नाथकी सेवाका सीभाग्य मिलेगा? मुझे वे अपनी समझकर अपनार्वे-गे १ फिर इस पापी जीवनको ही रखकर मै क्या करूंगी ? जब-मेरा ससारमें कोई अवलम्ब ही नहीं तब मैं किसके लिए इस प्राण-भारको उठाकर पृथ्वीको बोझा मार्छ 2 जब मेरा भाग्य सब तरह फूट ही गया है तब मै ही जीकर क्या करूंगी ? पापी दैव ! तेरे समान संसारमें कोइ निर्दयी नहीं है । तूं अपनी सत्ताके सामने किसी-की नहीं चलने देता। तू नो चाहता है वही कर दिखाता है। तेरे इस निर्दय संकल्प को धिकार है। कहते कहते कञ्चनकी आखोंसे आसुओंकी धार वह चली । वह आकाराफी ओर मुहँ उठा कर बोली-परमात्मा । मै विपत्तिकी मारी एक अनाथिनी हूं। संसारमें मेरा कोई नहीं है । मेरा जीवन ही मुझे शूलसा लग रहा है । मुझे जीने-में सार नहीं दीखता । मैने आजतक जो कठिनसे कठिन दुःख सहा है वह अपनी धर्मरक्षाके छिए। पर अब मै नहीं सहूरी। मझसे यह जीवनभरका दु:ख देखा नहीं जाता । इस लिए मैं अब किसी ओर ही उपायका सहारा छूंगी जिससे सदाके छिए ही दु:ख-से छुटकारा पा सकूं। उस उपायके पहले मै आपसे एक प्रार्थना करूं गी। वह यह है कि मै आजतक किसी भी अवस्थामें रही हूं पर तब भी मेरा हृदय पूर्ण रूपसे शुद्ध रहा है। मैने दुःखपर दुःख भोर्गे हैं, पर आजतक महीन वासनाको अपने हृदयमें स्थान नहीं दिया है ! मै आपसे क्या निवेदन करूं। आप तो सब कुछ जानते है। संभव

में इतन दिनोंतक अवला या पर अव में वह कक्षन नहीं रही। अव मुझमें वल है। में किटनसे किटन और असंभवसे असभव कामकों भी अव कर सकती हूं। केवल कर ही नहीं सकती हूं, पर करके दिखलाऊंगी। में अपने.... के संकल्पको पूरा करूगी। मुझे इससे उतना दुख नहीं जान पड़ता जितना कि इस अवस्थाका दुख मुझपर असहा भार हो रहा है। जो हो आप मेरी प्रार्थना पर घ्यान देना। अधिक में कुल नहीं कहना चाहती।

वह फिर वोली—प्राणनाथ ! द्यासागर !! अनाथरक्षक !! मेरा अपराध—भयकर अपराध—आप क्षमा करना । मैं आपकी थी पर आपने मुझे अपनी न समझी । इसी दु खसे—भयंकर विपत्तिसे—मुझे आपके धर्म विरुद्ध..... कहते कहते कञ्चनका गला भर आया। उसने वडी मुष्किलसे रोते रोते यह कह कर कि इस अमागिनी पर क्ष....मा....क....र....ना.....क्ष......भा....कर.....भा.....भा.....कर.....और झटसे कुछ अपने मुहमें डालकर ऊपरसे पानी पी लिया। देखते देखते ही उसके द्वारीरकी ज्योत्स्ना म्लान हो चली।

(८) भयंकर परिणाम ।

पाठक ! कञ्चनकी जीवनलीलाके साथ साथ हमारी यह छोटीसी आख्यायिका भी समाप्त होती है, पर एक जरूरी घटनाका उछेख करना वाकी रह जाता है। इस लिए इस परिच्छेदमें हम उसी-का उछेख करते है।

पूनमचन्दको मरे आज आठ वर्षके छग भग बीत चुके है। ताराकी उनके समयमें जो अवस्था थी वह अब नहीं। रही उसके अब बालभाव छोड़कर युवावस्थामें पढ़ार्पण किया है। उसके भावोंमें पहलेसे अब जमीन आश्रमानका अन्तर है। अब वह पित पत्नीके भावको भी समझने छगी है। कामकी कृपासे अब उसमें अपूर्व श्रीका आविभीव दीख पड़ता है। उसके निष्कलंक मुख-चन्द्रकी ज्योत्स्नासे उसका हृद्य प्रकाशित हो उठा है। वह उसके उनालेमें न जाने किसे ढूंढ रही है। पर उसके मुखकी निराशा और हृद्यकी व्ययतासे जान पड़ता है। वर उसके अपनी प्रिय वस्तकी प्राप्ति नहीं हुई। उसके सुन्दर लोचन अंगूठीमें जड़े हुए हीरेकी तरह दमकने छगे। बेचारा खझनतो उन्हें देख

कर इतना लिजित हुआ कि उसे शहरका निवास ही परित्याग कर देना पडा। उसकी भ्रुवें इतनी चञ्चल होगई कि क्या मजाल जो निजली भी उन्हें पराजित कर सके? वेचारे वाणकी क्या ताकत
जो मनुप्योंके हृद्यमें इनके वरावर गहरे घाव कर सके? उसके होठोंकी मधुर हँसी लोगोंके कठोरसे कठोर हृद्यमें तीरकी तरह भिदने लगी। उनकी लालिमा प्रात कालीन सूर्यकी लालिमाको द्वाने लगी। उसके स्तनोंकी सुन्दरताने सुधापूरित कल्शोंकी शोभाको लिजित कर दी और उसके सुवर्णमय शरीरके मनोहारी लावण्यने सुमेर शैलकी कान्तिको मुला दी। योडेमें यों कह लीजिए कि अव तारा सब तरह कामके आधीन हो चुकी। कामने उसपर अपनी राज्यसत्ताकी—अपने आधिपत्यकी—मोहर लगा दी।

तारा अव समझने छगी कि मै बहुत वर्षोसे अनाथिनी हो चुकी हूं। मुझे मेरी माताने—राक्षसी माताने—इस नरकमें ढकेछी है। वह उसे अब जीती जागती पिशाचिनी डीग्वने छगी। वह कैसी भी है, पर अब हो क्या सकता है। अब तो उसकी आखोंके सामने निराशाका अथाह समुद्र छहरें छेता हुआ दिखाई पडता है। वह कत्तव्य विमूद अवश्य है पर तब भी उसके भावोंमें परिवर्तन होगया है। हम उसमें पवित्रता नहीं देखते। उसका हृद्य कछंकसे काला जान पड़ता है। उसकी दृष्टिमें अब चञ्चलता है। उसका मन अधीर है। वह उसे अपने काबूमे रखनको असमर्थ जान पड़ती है। उसका यह सब चारित्र देखकर सभव है पाठक ताराको अपराधिनी कहें, पर इसमें उस वेचारीका दोष क्या असमर्थ जान विवाह भी उस समय हुआ है जब वह अजान विका थी। फिर विवाह मी एक

जहीसके साथ जो अपनी मौतके दिन पूरे कर रहा था। यह दोष यह अपराध उसकी पापिनी माता और निर्देगी—नरपिशाच—पूनम-चन्दका है जो दोनोंने अपने अपने स्वार्थके वश होकर उस गरी-बिनी असमझ बालिकाके गले पर छुरी फेरी—उसे जीवन भरके लिए—नरककुण्डमें ढकेल्दी।

ताराका हृद्य अत्र दिनों दिन बुरी वासनाओंका स्थान वनने लगा। पाठक! आप कुछ भी कहें पर इसमें सन्देह नहीं कि कामसे विजय पाना—उसके विकारोंको नष्ट करना—सर्व साधारणका काम नहीं। जिस कामने चारुदत्त सरीखे कर्मवीरको पाखाने की हवा खिछाई, रावणके विशाल राज्यको रसातल्यों मिलाकर उसे कल्लकियोंका शिरोभूषण बनाया, सत्यंघर सरीखे राजतत्ववित् राजाका सर्वनाश कर दिया, ब्रह्माको अपनी ही पुत्रीपर प्रेमासक्त कर उसे अपने देवपनेके उच्चासनसे गिरा दिया, संसार के उपास्य शंकरको आधे खीरूपमें परिवर्तित कर दिया और चन्द्रको अपने गुरुकी पत्निक प्रेमपाशमें फॅसा दिया। वह काम—जगद्विजयी काम—वेचारी ताराके—अवला ताराके—द्वारा जीता जा सके यह नितान्त असंमव।

अधियारी रात है। शहर भरों कहीं शब्दका नाम नहीं। चन्द्रमाका अभी उदय नहीं हुआ है। जान पड़ता है कि वह पहलेहींसे तो कलंकी हैं और आजकी असाधारण कलंकित घटनाको देखकर वह अपनेको क्यों और अधिक कलंकित करें! क्योंकि कलंकियोंकी छायाका छूना भी तो कलकित करता है। यहीं समझ कर वह अभीतक उदय पर्वतपर नहीं आया है।

एक वजा। ताराकी नींद टूटी। उसकी आखों में पहलेही से नींद कहा थी पर कल्पना कर लीजिये कि वह अपनी शल्यापर पड़ी है। इस लिये देखनेवालों को तो निदितहीं जान पड़ेगी। उसने उठकर अपने कमरे के कवाड खोले और वह धीरे धीरे मकानकी सीढिया तय करती हुई विचके मिजलमें आ पहुची। वहीं पर मोतीलालके सोनेकी जगह थी। उसने दरवाजे के पास खड़ी हो कर मोतीलालको पुकारना चाहा, पर सहसा उसकी हिम्मत न पड़ी। न जाने क्या सोच समझकर वह पीछी अपने कमरेमें चली गई और शल्यापर आ गिरी। पर अब उसे नींद नहीं आती। वह उधर इधर करवें बदलने लगी। उसका हृदय बेचेन होगया। वह हिम्मत करके उठती है पर पीछी न जाने क्यों बैठ जाती है। वह कवाड खोलकर कुछ सीढ़िया उतरती है और पीछी लौट आती है। योंही करते करते उसे दो घटे होगये।

अवकी वार वह अपने दिलको मज़वूत करके उठी और विना किसी रुकावटके नीचे उतर आई। उसने मोतीलालके कमरेके पास खडी होकर धीरे धीरे कवाड खट खटाये। मोतीलाल भरनींद्रमें था। पर किसी भयानक स्वप्नके देखनेसे वह हापता हापता उठ वैठा। कवाडकी खटखट आवाज सुनकर उसे कुछ सन्देह हुआ। उसने भीतरहीसे पुकारा—कोन है 2 तारा धीरेसे वोली कि यह तो मै हू, जरा कवाड खोलो। मोतीलालने ताराका स्वर पहचानकर कवाड खोल दिये। तारा भीतर जाकर वैठ गई और हापते हापते उसने कहा कि मै ऊपर सोती हुई थी। न जाने एका एक क्या धड़ाका हुआ। मुझे डर लगने लगा। इसीसे मै यहा आगई। मोतीलालने यह कह कर, कि अच्छा अब यहीं सी रही सबेरे देखा जायगा कि क्या होता था, सोगया । तारा भी वहीं पर छेट गई। पर भयभीत उसका हृदय अभी भी शान्त नहीं हुआ। वह और भी अधिक व्याकुछ होगया। तारासे चुप न रहा गया। उसने बातोंका सिछ सिछा छेड ही तो दिया।

वह बोली—मोतीलाल ! देलो तो अपना घर थोडे ही दिनोंमें कैसा सूना सूनासा होगया ^१ निधर मैं आंख उठाकर देखती हू मुझे तो उधर ही बड़ा डरावना लगता है।

मोतीलाल-भाग्यका ऐसा ही फेर कहना चाहिए।

तारा—यह देखकर वहुत दुःख होता है कि इतने बडे घरमें केवल तुम और मै ही बची हूं। और फिर देखो तो दोनों ही अभागे—दोनों ही दुखी है। कैसी देवी घटना १ हां क्यों मोतीलाल ! तुम अब कभी बेचारी बहूकी भी याद करते हो १ देखो, न जाने उसे क्या सूझी जो वह आत्महत्य। करके मर गई १ वह भी हमोर देखते देखते !

मोतीलल—उसके भाग्यहीमें ऐसा लिखा था, इसका हम क्या करें ²

तारा—मोतीलिल । वह थी वडी सुन्दर । आखिर उससे भी हमारे वरकी वहुत कुछ शोभा थी । देखो सुन्दरता भी क्या चीज है जो तुरत दूसरेके मनको अपनी और झट खींच हेती है हा मोतीलिल तुमसे मै एक बात पूछती हूं उसे ठीक ठीक बताना यमुझसे बहू अधिक सुन्दरी थी अथवा मै उससे अधिक हूं 2

मोनीलाल-मेंने उसे बहुत बार तो देखी नहीं। पर हां कभी कभी अवस्य देखी है। वह तो मुझे लकड़ीकी तरह मूखी मूखी और पीली पीली जान पड़ती थी। मुझे तो उसे देखकर एक तरह अरचि हो जाती थी। में कह सकता हूं कि उसमें और तुमम जमीन आशमानकासा अन्तर है।

तारा—मोतीलाल! क्या तुम मुझे उससे अधिक मुन्द्रों समझते हो! अच्छा तव तो में तुम्हारी दृष्टिमें बहुत खूबसूरत हू। मोतीलाल! सॉन्द्रये भी कैमा प्यारा होता है 'वह भी किर स्त्रीका 'तुम सच तो कहो कि तुमने भी कभी मौन्द्रयेपर प्रेम किया है। मोतीलाल! तुमर मेरा बड़ा प्रेम है। हा ठीक भी तो है, मेरे देखनेको तुम्हारे सिवा और हेही कौन! तुम्ही मेरी आल्के तारे हो। किर तुमपर ही प्रेम न होगा तो किसपर होगा 'पर मोतीलाल! यह जानकर हृद्यपर बज्जका पहाड़ गिर पडता है कि मेती दु खी हूं सो हृही पर साथ ही तुम्हें भी दु.खके अगरसमुटम हूवा हुआ देखती हूं। क्यों मोतीलाल! क्या तुम कोई उपाय नहीं करते जिससे में तुम्हें सुखी देख सकूं!

मोतीलाल-तुम नयीं इतनी निन्ता करके दुली होती हो ² देखा

ताग—हां मेातीलल ! मुनो तो तुम अगना दिवाह क्यें। नहीं कर छेते ?

मोतीस्त्रस्य प्रक निवाह ही बड़ी कठिनतासे हुआ था. अत्र न जाने कितनी तकरीफ स्टानी पंडगी 2

तारा-नयां ? तकलीक कैसी ?

मोतीलाल—मुझे तो कुछ मालूम नहीं पर पिताजी कभी कभी कहा करते थे कि मोतीलालके विवाहमें वड़ी दिक्कतें उठानी पड़ी थी।

तारा—अच्छा नाने दो। तुन्हें विवाह करके ही क्या करना है? जनतक कि......हां मोतीलाल! यह तो कहो कि प्रेम करना कैसा है ? और तुम उसे कैसा समझते हो ?

तारा—निर्द्धज्ञ तारा—मोतीलालको वातोंमें लगाकर धीरे धीरे उसके पलंगपर जा वैठी | मानो घींके पास आग्ने आ विराजी | नीति कारने वहुत ठीक कहा है—

अङ्गारसदृशी नारी नवनीतसमा नराः । तत्तत्सान्निध्यमात्रेण द्रवेत्पुसा हि मानसम् ॥ आगे क्या हुआ ? यह छिखनेको हम छाचार है ।

उपसंहार ।

तारा बहुत दिनोंतक आनन्द मनाती रही। पर पापका—महापापका-फल भयंकर होता है। उसे अपने पाप छिपानेके लिए एक अनर्थ और करना पडा । वह क्या ? भ्रूणहत्या—वालहत्या। जब वह इस पाप कल्ड्कसे बचनेके लिए बच्चेको—अपने जिगरको—कुएमें डालने गई तब पांवके फिसल जानेसे उसके साथ साथ आप भी डूब मरी। अभागे भारत! तेरी छातीपर तो ऐसे महापातक दिन-रात हजारों ही होते है। इसीसे तेरा अधःपतन हुआ है—तेरा सर्व-नाश हुआ है।

एकता ।

यह वात किसीसे छिपी हुई नहीं है कि ऐहिक और पारलौकिक उन्नतिका वीज एकता है । यदि हम संसारकी प्रत्येक वस्तु पर ध्यान देंगे तो हम जान सकेंगे कि वे सब एकतासे खाछी नहीं है। देखिये, वर्णमालाके अक्षरींकी एकतासे शट्ट पद वाक्यादि वनते है । वाक्योंके द्वारा हम अपने इप्ट अभिप्रायोंको कहकर तथा लिखकर प्रगट कर सकते हैं । जैन वाड्यय, जिससे हमारा आत्म-कल्याण होता है, एक मात्र वर्णमालाके अक्षरोंकी एकताका प्रभाव है। मंत्र तत्रका अचिन्त्य प्रभाव भी एकताके विद्युन् चमत्कार-से खाली नहीं है। वस्त्र, जिसके द्वारा हम अपने शरीरकी रक्षा करते हैं वह भी मृतके डोरोंकी एकताका आविप्कार है। वीमारियोंको निर्मूल करनेवाली औपधिया मी एकताके मैत्रसे पवित्रित है। जिन वरेंगें हम रहते है वे भी ईट मिट्टी पत्थर आदिकी एकतासे वने हैं। सूतके धार्गोकी एकतासे वने हुए रस्ती द्वारा मटोन्मत्त हाथी वाघे जाते है-इत्यादि । निधर देखिए उघर हा आपको सारा संसार एकता मय दीख पडेगा । फिर क्यों न हम भी इस महाशक्तिके प्राप्त करनेका प्रयत्न करें वस्यों न इसे अपनी जाति भरमें फैला दें 2 यह तो हुई एकताकी महिमा।

अव अनेकताके महत्त्वको सुनिये—नहा इसका पदार्पण होता है वहीं सत्र उन्नतिका अन्त हो जाता है। सत्र सामाजिक और धार्मिक काम नष्ट हो जाते है। परस्परमें कपार्योकी अग्नि धवक उठती है। हृद्य द्वेप और ईपीका स्थान वन जाता है। भाईको भाई वृणा दृष्टिसे देखने ल्यता है । जिस घरानेमें, जिस वंशमें, जिस जातिमें, जिस देशमें और जिस राष्ट्रमें अनेकता विस्तार हो रहा है, समझलो कि उसका भविष्य अच्छा नहीं है। सामाजिक शक्तिको निर्मूल करनेवाली एक मात्र फूट है । जैनजाति अनेकताके ही कारण रसातलमें पैठती जा रही है। आज यूरोपियन, पारसी, आर्यसमाजी आदि सभी एकताके प्रभावसे दिनोंदिन उन्नतिके शिखरपर आरूढ़ हो रहे है । पर खेद है कि जैन समाजने अभीतक अपनेको एकताके सूत्रमें गुन्फित नहीं किया । न मालूम कव वह शुभ दिन आवेगा जब सब जैनी एक चित्त है।कर धार्मिक, छौकिक और पारमार्थिक उन्नति करनेमें संख्य होंगे । दिगम्बर नैनियोंमें खण्डेलवाल जातिकी संख्या सबसे अधिक है। पर अविद्या और अनेकताकी मात्रा भी सबसे अधिक इसी नातिमें पाई नाती है। लक्कर, नयपुर, अनमेर, इंदौर भ्रतपुर, कुचामन इत्यादि नगरोंमें, जहा इस जातिकी बहुत संख्या है वहां विकराल फूट पड रही है। जातिमें तड़े पड़ गई हैं। एक तड शले दूसरी तडवार्लोको रात्रुभावसे देखते है और उनकी मानहानि कर-नेमें विलकुल नहीं सकुचाते हैं। जिस खण्डेलवाल जातिमे प्राचीन समयमें पचो द्वारा नातीय झगड़े मिटाये नाते थे, आन वही नाति अपना निवटेरा करानेको दूसरेके द्वार द्वार ठोकरें खाती फिरती है। पहले जिसकी शक्ति इतनी वड़ी चढ़ी थी कि यदि जातिमें कोई कुलाङ्कार व्यभिचारी होता तो जातिसे उसका बहिप्कार किया नाता था तथा और भी अन्याय प्रवृत्तिका उचित दण्ड देकर धार्मिक मयीदा बनाई रक्ली जाती थी, पर आज वे सब बार्ते छोप होगई। पर्चोमें प्रपंच फैल गया। लौकिक लज्जा जाती रही। जो

धर्म विरुद्ध कार्य, धर्म-धुरंघर वंधुओं और विद्वानों द्वारा जातिसे वंद-किये गये थे वे ही आज निर्राष्ट्रतासे जारी होगये । जैनी दयाधर्मी कहलाते हैं, परन्तु अपने भाइयोंसे वे महानिर्देयताका वर्ताव करनेमें सदा कटिवद्ध रहते हैं। इसीसे कहना पड़ता है कि न मालूम इस जातिका क्या होनहार है ? एक समय यह जाति शान्ति और एकताकी आदर्श जाति समझी जाती थी, पर आज वह सब स्वप्न-कीसी छीटा जान पड़ती है। उसमें अनेकता और अशांतिका पा-रावार नहीं रहा । नहां देखो वहां जातिके. भाई आपसमें सुलह करना महापातक समझने लगे । उनका क्रोध आंखोंमें उवल उठने लगा। उन्हें अपने ही सधर्मियोंसे बदला हेनेके लिये अदालतीमें पहुंचना पड़ा । वहां पहुंचते ही उनकी आंखोंपर पट्टी वंध गई। मुकद्में चलने लगे। अंघाधुंघ द्रव्य खर्च होने लगा। जगतमें अपयराका डंका वज गया । इस प्रकार धर्म, धन, मान, यरा, सबको वे जलांजुला दे बैठे । पाठकगण ! खण्डेलवाल जातिके लिये यह कितनी लजाकी वात है ? इससे अधिक और क्या हमारी अधोगति हो सकती है ?

इस सर्वकपा जातीय फूटने—घरेलू झगडोंने—उन्नतिके मार्गमें कांट्रे बोदिये हैं। अन्य जातियोंमें जातीय भाइयोंका पारस्परिक प्रेमभाव देखकर हृद्यमें जितना ही सन्तेष होता है उससे भी कहीं अधिक दुःख अपनी जातिकी दुर्द्शाके देखनेसे होता है। आश्चर्य इस बातका है कि जीवमात्रसे प्रेम करना जिसका प्रधान कर्त्तव्य था उसीका उससे तिरोभाव होगया। यहांतक कि कुटुम्बीय कल्रहके कारण वंशके वंश नष्ट होगये। भाई भाईमें, पति लीमें, पिता पुत्रमें, वहिन भाईमें दुश्मनी होगई । फूटने समूह शक्तिके सर्वस्वको अपहरण कर लिया । सहनशीलताका सर्व नाश होगया । मानकपायके वश हो प्रत्येक अपनेको अहमिन्द्र समझने लगा । परस्पर सहायताकी आशापर पानी फिर गया । इसी प्रकार इस जातिसे उपगूहन और स्थितिकरण अंग मी विदा होगये । अर्थात् साधर्मियोंके दोपोंको ढांकना और उन्हें धर्मसे डिगते देखकर धर्मके सन्मुख करना इन धर्मवृद्धिके दोनों कारणोंका अभाव होगया ।

इग्लैंड, जर्मनी, जाणन आदि देशोंमें जो आश्चर्यकारी उन्नति हो रही है उसका कारण एकता है । सहस्रों क्वापरेटिव सोसाइटी, कंपनिया, मिर्छे, जिनसे छौकिक उन्नति होती है और लाखों मनुप्योंका निर्वाह होता है, एकताकी शक्तिसे चलते है । सब जानते है कि विलायतवाले अपने कौराल और पुरुपार्थके बलसे संसारका धन अपने देशकी ओर ले जा रहे है और उसे चिकत कर रहे है तौ भी हम मोह निदासे जागृत नहीं होते । दैवने हमारे पाव पकड़ रक्खे है । खण्डेळवाळ जातिमें धनकी कमी नहीं है, तो भी कोई कंपनी, मिल, बैक आदि इस जातिके धनवानोंने स्थापित की हो यह देखनेमें नहीं आता । इसीसे दिनोंदिन यह नाति दरिद्रताके प्रहमें प्रसित होती ना रही है। पुरानी शास्त्र विरुद्ध रूढ़ियोंके घुनसे हम घुने जा रहे है। यदि कोई सुधार करना चाहता है तो रुढ़िके गुलाम उसका कठ पकड़ छेते है और बुरी तरह सामना करने छगते है। जैसा कि पाठक, "बडनगरमें विद्याशत्रुओं-की धींगाधींगीं " से मालूम कर चुके है । उद्योग प्रधान कार्यालय खोछनेका साहस नहीं होता । इसका कारण अविद्या और अविश्वास है। इस जातिके धनाढचोंके हृद्यमें करुणादेवीका वास विल्कुछ नहीं है। तभी तो वे जातिके अनाथोंकी रक्षा नहीं करते, उन्हें शिक्षा प्राप्तिके सुगम मार्गमें नहीं छगाते और न इस वातकी परवा करते कि अपनी जातिमें विना उद्योगके दु ससे निर्वाह करने वाछे नैनीं माई कितने हैं यदि वड़े वडे कारखाने खोछे जांवें और गरीव जाति-माई उनमें कामपर छगाये जांवें तो उनका निर्वाह और जातिकी द्रिद्ता नष्ट होनें छगे। पर उनमें प्रेमके—जातीय प्रेमके—विना इतनी करणा कैसे हो सकती है 2

एक समय पांचों इद्रियोंमें झगडा खड़ा होगया। प्रत्येक इन्द्री अपनी अपनी प्रधानताका कीर्त्तन करने छगीं कि मैरे न होनेसे शरीरका कोई मी काम नहीं चछ सकता। इसी कछहके कारण एक दिन स्पर्शन इद्रियने स्पर्श करना, जीभने स्वाद छेना, नाकने गंघ छेना, आखने देखना और कानने सुनना छोड़ दिया। परिणाम यह हुआ कि निष्क्रिय रहनेसे वे सब शिथिछ पड़ गई। तब उन्हें मालूम होगया कि जबतक हम बिना विरोधके एकतासे आपना कार्य करतीं रहीं तबतक हृष्ट पृष्ट और कार्यतत्पर चनी रहीं। पर जब हममें विरोध फैछ गया तब एक ही साथ हम सब निबछ होगई। ठीक यही दशा खण्डेखवाछ जातिकी हो रही है। जबतक उसमें फूट रहेगी तबनक वह किसी प्रकारकी उन्नति नहीं कर सकती।

आपको गंजीफा अर्थात् तास खेलनेका प्रसंग अवश्य मिला होगा । कहिये, आपने इस खेलसे किस प्रकारकी शिक्षा ग्रहण की ? इन पत्तोंके खेलमें भी एक अद्भुत शिक्षा दी गई है । उसपर ध्यान दीजिये । आप जानते है कि गुलामको रानी जीत लेती है, रानीको वादशाह जीत लेता है और बादशाहको इक्का जीत लेता है । पर इक्काको कोई नहीं जीत सकता । राजा मी उसके साम्हने हार मानता है। यह इक्का कोई अन्य वस्तु नहीं है। किन्तु एकताको ही इक्का कहते हैं। इस लिये जहां एकता है वहीं जीत होती है।

यदि आप अपनी जातिकी उन्नति करना चाहें तो मेलसे काम करना सीखिए, साधर्मियोंसे वात्सल्य धारण कीजिए और एकताके प्रबल किले द्वारा अपनी जातिको सुरक्षित बनाइये। फूटने हमारा सर्व नाश कर डाला है। इस लिए अब हमें उसका साथ छोड़ देना जरूरी है। और तब ही हम अपनी उन्नति कर सर्केंगे। परमात्मा करे वह दिन हमें शीघ प्राप्त हो जब हम भाईसे भाई गलेसे लगें और मिलकर जातिकी अवनतिको उन्नतिमें परिणत करदें।

प्रार्थी--बुद्धमल पाटनी, इंदौर।

बारह भावना । अनित्यभावना ।

देह गेह सजनेमें छगे क्या हो, गिरिधर देह गेह जोवन अनित्य सब मानिये, पीपछके पान सम कुंजरके कान सम बादछकी छांह सम इन्हें चल जानिये। विजलीकी चमकसी पानिके बुद्वुदसी इन्द्रके धनु-पसी ये सन्पत्ति प्रमानिये, द्या दान धर्ममें लगाके इसे मली भांति ठानिये परोपकार सुख मन आनिये। *

क वावा भागीरथजीके द्वारा प्राप्त ।

अशरणभावना ।

राजा महाराजा चक्रवर्ती सेठ साह्कार सुर नर किन्नर सकल गिन जाईये, कोई भी समर्थ नहीं किसीको वचानेको आसरा इन्हींसे फिर किस तरह पाइथे। तरण एक गुरुके चरण सोहें, उनकी शरण गह ज्ञान मन लाइये, गाइये गुणानुवाट गिरिधर ईश्वरके भयको नसाइये औ आनंद मनाइये।

संसारभावना ।

नाना जीव बार बार जनम जनम मरें नये नये घरें देह जाचकर लीजिए, जग है असार यहा कोई वस्तु सार नहीं दुखभरी गतिया है चारों देख लीजिए।गिरिधर चित्तमें न देाप कहीं घुस बैठे इससे स-दा ही सावधान रह लीजिए, सबकी भलाईकर रिखये चिरत्र शुद्ध पीजिए सुज्ञानामृत आत्मध्यान कीजिए।

एकत्वभावना

आये है अकेले और नायगे अकेले सन मोगेंगे अकेले दुख सुख भी अकेले ही, माता पिता माई नन्धु सुत टारा परिवार किसीका न कोई साथी सन है अकेले ही, गिरिधर व्योडकर दुनिधा न सोचकर तत्त्व छान नैठके एकान्तमें अकेले ही, करूपना है नाम रूप झूठे राव रक भूप अद्वितीय चिदानन्द तुम हो अकेले ही।

अन्यस्वभावना ।

घर बार धन घान्य दाँछत खजाने माल भूषण वसन वडे वडे़ ठाठ न्यारे है, न्यारे न्यारे अवयव शिर, घड, पाव न्यारे जीम,

त्वचा, आख, नाक, कान आदि न्यारे हैं। मन न्यारा चित्त न्यारा चित्तके विकार न्यारे न्यारा है अलड्डार सकल कर्म न्यारे हैं, गिरि-घर शुद्ध वुद्ध तू तो एक चतन है जगमें है और नो नो तोसे सारे न्यारे है।

अशुचिभावना ।

गिरिधर मलमल साबू खूब न्हाये धोये कीमती लगाये तेल बार बार बालमें, केवड़ा गुलाब बेला मोतियां सूंबे इत्र खाये खूब माल ताल पड़े खोटी चालमें। पहेंने वसन नीके निरख निरख काच गर्व कर देहका न सोचा किसी कालमें, देह अपवित्र महा हाड़ मांस रक्त भरा येला मलमूत्रका बंधा है नसजालमें।

आस्त्रवभावना ।

मोहकी प्रवछतासे कपायोंकी तीव्रतासे विषयोंमें प्राणीमात्र देखों फंस जाते हैं, यहा फसे वहां फंसे यहां पिटे वहां कुटे इसे मारा उसे ठोका पाप यों कमाते हैं। पड़ते परन्तु जैसे जैसे हैं कषायमन्द वैसे वैसे उत्तम प्रकृति रच पाते हैं, गिरिधर बुरे भछे मन वच काय-योग जैसे रहें सदा वैसे कमें वन आते हैं।

संवरभावना ।

तोड़ डाल भ्रमजाल मोहसे विरत हो जा कर न प्रमाद कभी छोड़दे कषाय तु, दूर हो विचार वात करनेसे विषयोंकी माथे पड़ी सारी सह मत उकताय तू। मन रोक वाणी रोक रोक सब इंद्रियोंको गिरिधर सत्य मान कर ये उपाय तू, बधेंगे न कर्म नये निरेपक्ष होके सदा कर्ताव्य पालनकर खूब ज्यों सुहाय तू।

निर्जराभावना ।

" इससे न बात करो इसे यहा न आनेदो इसको सतावो मारो क्यों-कि दोषवान है, कपटी कलंकी कूर पापी अपराधी नीच कामी कोषी लोभी चोर कुकर्मोंकी खान है।" रखके विचार ऐसे लोग जो सतावें तो भी सहले विपत्तियोंको माने ऋणदान है, गिरिधर धर्म पाले किसी-से न बांधे वैर तपसे नसावे कर्म वही ज्ञानवान है।

लोकभावना ।

वाकी कर कोन्हियोंको जरा पाव दूरे रख़ आदमीको खडाकर गिरि-धर ध्यान धर, चतुर्दश राजू लोक ऐसा ही है नराकार उसमें भेर है द्रव्य छहाँ सभी स्थानपर। एकेंद्रिय द्वीन्द्रिय त्रीन्द्रिय चतुरिन्द्रिय त्यों पचेन्द्रिय सन्यसंज्ञी पर्याप्तापर्याप्त कर, भरे ही पडे है जीव पर सव चेतन है स्वानुमव करें त्यों त्यों पावे मोक्षधाम वर।

बोधिदुर्लभभावना।

एक एक श्वासमें अठारे अठारे वार मर मर घरें देह जग जीव जानलो. वड़ी ही कठिनतास निकले निगोदसे तो अगणित बार भमे भव भव मानलो । दुर्लभ मनुष्य भव सर्वोत्तम कुल धर्म पाये हो गिर-धर तो सत्य तत्त्व छानलो, होकर प्रमाद वश कालक्षेप करो मत सबकी भलाई करो निजको पिछानलो ।

धर्मभावना ।

वाहरी दिखावटोंको रहने न देता कहीं सारे दोप दूर कर सुख उपजाता है, काम कोघ छोम मोह राग द्वेप माया मिध्या तृष्णा मद मान मछ सबको नसाता है। तन मन वाणीको बनाता है विशुद्ध और पतित न होने देता ज्ञान प्रकटाता है, गिरिधर धर्म प्रेम एक सत्य नगवीच परमात्म तत्त्वमें जो सहज मिलाता है।

गिरधर शम्मी झालरापाटन ।

संतानशिक्षा ।

माता शत्रुः पिता वेरी येन वालो न पाठितः।

" सन्तान उत्पन्न करके उसके दारीरकी रक्षा करना, उसे पुष्ट करना और उसके पालन पोपणके लिए धन इकट्ठा करना ही सन्तान-के प्रति माता पिताका कर्त्तव्य नहीं है । किन्तु जो जीवनकी अपेक्षा बहुत मूल्यवान है और जिससे मानव जीवन सार्थक होता है उस अमूल्य ज्ञान और धर्मीपदेशसे अपनी सन्तानको भूपित करना माता पिताका प्रधान कर्त्तव्य है ।"

सन्तानके प्रति माताका कर्त्तव्य दो प्रकार है। प्रथम-सन्तान-पालन अथीत् सन्तानकी शारीरिक उन्नति और द्वितीय-संतानिशक्षा और चरित्रगठन। सन्तान पालनके सम्बन्धमें इस समय न लिखकर फिर कभी लिखेंगे। आज केवल सन्तानिशक्षा और चरित्रगठन-के सम्बन्धमें कुछ लिखते है।

गृह ही मनुष्यका प्रथम और प्रधान विद्यालय है। माता उसकी मुख्य अध्यापिका है। इसी विद्यालयमें मानव हृदयमें सर्व प्रकार-के गुण और दोषका बीज अद्भुरित होता है। किसी एक विद्यानने निश्चय किया है कि सन्तान, ढेढ़ वर्षसे ढाई वर्षके बीचमें संसारकें पदार्थगत और अपने तथा परके मानसीक प्रकृतिगत ज्ञानका जितना ज्ञान प्राप्त करती है, उतना ज्ञान जीवनके अवशिष्ट भागमें वह कभी नहीं कर सकती।

किसी एक अंग्रेजी पुस्तकमें लिखा है कि किसी स्त्रीने अपनी सन्तानको चार वर्षकी अवस्थामें किमी धमेगुरूके पास लेजाकर उससे अपनी इच्छा प्रगटकी कि महाराज ! कबसे में अपने बच्चेको पढ़ाना आरम करू ! उसके उत्तरमें धमेगुरूनें कहा कि सन्तानकी अवस्था चार वर्षकी हो चुकी और तबतक उमे शिक्षा देना आरम नहीं किया तब कहना चाहिये कि उसके जीवनके अति मूल्यवान चार वर्ष तुमने व्यर्थ ही नष्ट कर दिये । इसके लिये तुन्हें पश्चात्ताप करना चाहिए । बालक जब अपनी माताको और देखकर हसने लगता है तब उसी हमीके माय साथ बालकको शिक्षा देना माताका कर्तव्य है । कारण तबहीसे शिक्षाका समय उपस्थित होता है ।

शिलाप्रणाली दो प्रकारकी है। एक दृशन्त द्वारा और दूसरी लप-देश द्वारा। इन दोनोंमें पहली प्रणाली अधिक कार्यकारी और जीवनपर असर ढालनेवाली है। इस दृशन्तप्रणालीसे माताके द्वारा नाना तरहकी शिला प्राप्त होती है। क्योंकि दृसरोंका अनुकरण करना वालकोका स्वाभाविक कर्तव्य होता है। वालकगण परिवारके वीचमें जो कुछ देखते हैं, फिर वे उसीके करनेकी चेश करते है और जो कुछ सुनते है वे उसे बोलना चाहते हैं। वालकोंका मन हरिततृणकी तरह अत्यन्त कोमल होता है। मुतरा तृणको जिस माति नवाना चाहो वह नवाया ना सकता है। वही हालत बालकोंके मनकी है। उसे जिस तरह शिलित किया जाय वह उसी तरह हो सकता है। उसमें एक और विशेषता है। वह यह कि उस समयकी शिक्षाका असर

उनके जीवनपर्यन्त वना रहता है। उसका फिर परिवर्तन नहीं होता। बाहक परिवारके माता, पिता, भाई, बहन आदि कुटुन्बियोंमें यद्यपि प्रत्येकका अनुकरण करता है, परन्तु उन सबमें माता ही प्रधान है। माताके साथ किसीकी तुलना नहीं की जा सकती। किसी विद्वानने इस विषयमें अपना अभिप्राय लिखा है कि "बालकका चरित्रगठन और मावी उन्नतिका होना एक मात्र माताके गुण और दोषके ऊपर निर्भर है। इस विषयमें पिताकी अपेक्षा माताकी ही प्रधानता स्वीकार करनी पड़ती है। उसने और भी लिखा है कि यूरोपमें यह पद्धति है कि किसी कारखानका मालिक जब अपने कारखानेमें किसी बालक अथवा बालिकाको किसी कामपर नियुक्त करना चाहता है तब वह उनकी माताका चरित्र अच्छा जान लेनेपर उन्हें निःसन्देह अपने यहां रख लेता है।

पृथिवीके जितने बड़े बड़े महात्माओंके जीवन चरित्र पढ़े है, जो अपनी असाधारण योग्यताके द्वारा संसारमें प्रासिद्ध हो गये है, उनमें अधिक महात्माओंने यह बात मुक्तकण्ठसे स्वीकार की है कि हमारी विद्या और बुद्धिकी जितनी कुछ उन्नति हुई है उसका मूछ कारण हमारी माता है।"

" महावीर नेपोल्लियन बोनापार्ट सदा यह कहा करता था कि सन्तान-का भाषी सुख दु:ख अथवा उसकी उन्नति अवनति यह सब माताके उपर ही निभेर समझना चाहिए। माताकी दी हुई शिक्षा ही हमारे ज्ञान और उन्नतिकी प्रधान कारण है।"

इनके सिवा और एक एजनीतिज्ञ अमेरिकाके विद्वानने लिखा हैं कि "बालकपनमें मैरी माता हाथ पकडकर बैठ जाती और कहती कि "तुम्हारा पिता (ईश्वर) मोक्समें है " यदि वालकपनकी ये वार्ते मुझे याद न रहती तो सचमुच में नास्तिक हो जाता। संसारमें ऐसे उदाहरणकी कमी नहीं है। हम अपने जीवनमें माताकी दी हुई शिक्षाका जो कुछ फल मोग रहे है, उससे लाभ उठा रहे हैं, उसके द्वारा ही माताके गुण दोप हमारे जीवनमें किस तरह अनायास अथवा दृदतासे कार्य करते है यह हम जल्दी समझ सकते हैं।

उपदेशकी अपेक्षा माता पिताका न्यवहार वालकके चारित्र-गठनमें अधिक काम करता है। ऐसा देखा जाता है कि उपदेश और हो और कार्य और ही हो तत्र भी वालकगण उप-देशका छोड़कर कार्यका ही अनुसरण और अनुकरण करते है।

सन्तानकी शिक्षा और उसके चरित्रगठनके सम्बन्धमें माताके गुरुत्वकी और हमारी वर्तमान अशिक्षतावस्थाकी मीमांसा करने पर सन्तानकें उन्नितकी आशासे निराश होना पडता है। हमारे देशमें सच्ची माता नहीं यह सामान्य छजा और दु.लका विषय नहीं है। जिसके ऊपर सन्तानकी शारीरिकि, मानसीक और नैतिक उन्नित निर्भर है उसे किस तरहकी गुणवती और विदुपी होनी चाहिए यह शब्दों द्वारा समझाना कठिन है।

(१) वालकगण उपदेशकी अपेक्षा कार्यका ही अधिकतर अनु-सरण करते है। इस लिए सन्तानके सामने किसी तरहका बुराकार्य नहीं करना चाहिए और न कभी बुरे वचन वोलना चाहिए। तुम्हारे खोटे व्यवहार करनेसे, दूसरेके प्रति अन्याय करनेसे अथवा किसीको ठगनेसे वालकके सुकोमल हृदयमें उसी, तरहका चित्र अङ्कित होजा- ता है। फिर उसे हजारें। उपदेश दीजिए पर वह दोष कभी नहीं दूर होनेका। वहुतसे ऐसे मनुष्य हैं जो बालकको अवोध समझ कर उसके सन्मुख खोटा न्यवहार करते लाजित नहीं होते। विचार करनेसे जान पड़ेगा कि यह केवल उनकी मूर्खता है। क्योंकि बालकके स्वच्छ-निर्मल-हृद्यद्र्पणमें माताका प्रत्येक कार्य प्रति-विम्वत होता रहता है।

- (२) बालकोंकी हर एक तरहकी बातें पूछनेमें स्वाभाविक उत्कण्ठा होती है। इस लिए बालक यदि कुछ देखकर अथवा सुनकर उस विषयमें पूछताल करे तो माताको उचित है कि वह उसके प्रश्नोंका ठीक ठीक उत्तर दे। ऐसा न करे कि उत्तरकी जगह उल्टा उसपर विरक्त अथवा कोचित हो। क्योंकि उसके पूछे हुए प्रश्नपर विरक्तता प्रकाश करनेसे अथवा किसी तरहका उत्तर न देनेसे उसकी प्रश्न करनेकी इच्ला धीरे धीरे कम हो जाती हैं। इसका परिणाम यह होता है कि शिक्षाकी घार फिर बिलकुल ही बंद हो जाती है। इस लिए बालकगण जिस समय जो बात पूछे उन्हें उस समय वह बात समझानेके लिए कभी आनाकानी नहीं करनी चाहिए।
- (३) बालकको पढने लिखनेके लिए अधिक धमकाना, मारना अथवा उसे पांचवपेसे पहले पढनेके लिए विद्यालय, पाठशाला आदिमें मेजना अनुचित है। इस अवस्थामें तो माताको चाहिए कि वह अपनी सन्तानको मौक्तिक शिक्षा दिया करे। इंग्लेण्ड आदि सम्य देशोंकी भाति वालकोंका विद्यालयोंमें रहना और उन्हें शिक्षित करनेके लिए वहा भेजना यद्यपि उचित है पर हमारे देशमें जबतक वैसे विद्यालय अथवा वैसी पढ़ानेवाली खिया नहीं है तबतक बालकोंके लिए घर ही

उत्तम शिक्षाका स्थान है। पाटशालाकी बुरी शिक्षाप्रणाली और कठोर शासन प्रणाली लिखने पटनेमें वालकोको इतना उदासीन बना देती है कि फिर जीवनपर्यन्त वह भाव हृटयमें खूब ठस जाता है और उससे वे लिखने पटनेका सुख अनुभव करनेमें असमर्थ हो जाते हैं। विशेष करके माता शिक्षापद छोटी छोटी कथाओं के द्वारा यदि वालकको शिक्षा टिया करे तो वे इतनी हृद्यग्राही और कार्यकारी होती है कि हजारों बार पढानेसे भी उतने फलके लामकी सभावना नहीं होती।

- (४) एकसे अधिक सन्तान हो तो भी माताको उन सवपर समान प्रेम और उनके सुधारके छिए समान प्रयत्न करना चाहिये । जब अपनी सन्तानपर माताका प्रेम कम ज्यादा होता है तब उनके हृद्यमें प्रतिहिंसा, द्वेप और पर्तपातका आविर्भाव होता है । भाई वहनके बीचमें पारस्परिक प्रेम नष्ट हो जाता है । सन्तान सुन्दर हो चाहे कुरूप हो, मूर्ख हो चाहे बुद्धिमान हो, उन सबका समान भावसे प्रतिपाछन करना चाहिए । ऐसा करनेसे भाई वहनमें प्रेमका अमाव नहीं होता है । होना तो ऐसा चाहिए पर आज कछ माताका प्रेम पुत्रीकी अपेक्षा पुत्रपर अधिक देखा जाता है । माताके छिए ऐसे भिन्न मावका होना अत्यन्त निन्दित है और यह भाव पुत्र और पुत्री इन दोनोंके छिए भी अहितका कारण है ।
- (५) जन वालक रोने लगता है और सोता नहीं है तन उसे भूत, पिशाच, वा सिंह, रींछ आदिका भय दिखाया जाता है पर वालकके लिए इससे वदकर कोई कुप्रथा अनिप्टकारी नहीं है।

इससे बालकपनमें ही मन अत्यन्त संकुचित भयवान और निरुद्यमी हो नाता है। फिर मनोवृत्तियों में स्फूर्ति और विकाश नहीं हो सकता। अन्धकार युक्त स्थानमें नानेसे अथवा किसी भयानक शब्दके सुननेसे फिर उनका हृदय कम्पित होने लगता है। विचार करनेसे स्पष्ट नान सकोगे कि ऐसी ऐसी दुप्प्रथा ही हमारे देशकी सन्तानके निर्वल होनेकी प्रधान कारण हैं। रोते हुए बालकको सहसा ऐसा डर दिखानेसे उसे उसवक्त नैसा कष्ट—दु:ख—होता है यह बतलाना बहुत कठिन है। यद्यपि उस समय बालक डरसे रोना अवश्य बंद कर देता है पर उसके वेगको सहसा रोकनेमें उसे असमर्थ होनानेसे फिर उसका हृदय फटने लगता है। वह उस समय आंखे मीचकर अथवा माताके आंचलसे अपना मुँह लिप'कर उसी मूर्ख माताकी गोदमें लिपनेकी चेष्टा करता है। इस तरहके भयसे ही अधिकांश बालकोंको अच्छी नींद नहीं आती और फिर इसीसे वे उस कची नीदमें स्वप्न देखकर रो उठते हैं।

(६) बालकको शान्त करनेके लिए बहुतसी उनकी माताएं उन्हें झूठा त्रिश्वास करा देती हैं । चुप रह! तुझे पिठाई दूंगी, खिलोंना दूंगी, आकाशसे चांद लादूंगी । इस तरहकी अनेक सची झूठी वातोंसे उसे वे शान्त करनेकी चेष्टा करती है । माता झूठ नहीं वोलती है, उसमें बहुत शक्ति है, वह इच्छा करते ही चन्द्र, सूर्य, आकाश, पाताल आदि सभी कुछ ला सकती है । पहले पहल वालकके सरल हदयमें इस ताहका विश्वास दृढ़ हो नाता है । बाद दो चार दिनतक इसी तरह उसे धोखा देनेसे वह फिर माताके कहनेपर विश्वास नहीं करता है। स्वयं भी झूट वोलने, दूसरोंको ठगने और

निराश करनेकी शिक्षा ग्रहण करता है । और जब वह बालकोंके साथ खेलनेके लिए जाता है तब उसे देखोगे तो जान पड़ेगा कि वह अपनी माताके उस झूठी आशा—लोभ और घोखा देनेका उन बालकोंके साथ कैसा अभिनय करता है ।

(७) वालककों भय दिखाकर अयवा मारने आदिके द्वारा उसे अपनी आज्ञामें चलाना मानों उसे आज्ञा उल्लघन करनेकी शिक्षा देना है। संभव है कि वालक दण्डके भयसे अपने सामने कोई बुरा आचरण न करे, परन्तु इसमें भी सन्देह नहीं कि आखोंकी आड़ होते ही वह बुरे आचरणकी रही सही कमीको भी पूरी कर देता है। जो वालक अपने माता पितादिके द्वारा अधिक ताड़ना किये नाते है उन्हें ही साधारणपनें दुष्ट और दुराचरणी कहना चाहिए।

वाल्कोंको तो प्यारके साथ शिक्षा देकर वशीभूत करना चाहिए। जब प्रेमसे बाल्क वश हो जाते हैं तब सामने वा पीठ पीछे कमी उनके दुराचरण करनेकी संभावना नहीं की जा सकती। ऐसी हाल्तमें बालक जब कमी दुराचरण भी कर लेता है तब उसके साथ थोड़ीसी अप्रीति बतला दी जाती है तो वही उसके लिए बड़ा भारी दण्ड हो जाता है। उसवक्त उसके हृदय यह विचार उत्पन्न होता है कि "आज मैने अन्याय कियान बुरा काम किया—इसी लिए माता मुझसे प्यार नहीं करती है और न बोलती ही है।" इस लिए फिर वह निरन्तर सावधान होकर रहते है।

(८) प्रेमके साथ वालकपर जासन करनेको छोड़कर और कोई शासन प्रणाली अच्छी नहीं है। वालकोंपर इसी प्रणालीसे शासन करना चाहिए। कठोर और कर्कश व्यवहार करनेसे अथवा भय दिखाने और मारनेसे उनके मनकी स्फूर्ति नहीं होने पाती। सदा शासनके भयसे वह डरपोंक हो जाता है और उसका स्त्रभाव भी कर्कश और नीच हो जाता है। जिस घरमें वालकोंके हृदयमें स्फूर्ति—चंचलता—नहीं है वहां वालक निर्भय चित्त होकर कभी खेल नहीं सकते। उन यमालय समान घरोंमें वालकोंकी मनोवृत्तिया स्फूर्तिवाली और तेजस्विनी होंगी यह कभी संभव नहीं। इस लिये उचित है कि हम उन्हें स्फुरित होने दें।

मनकी मौज।

(१)

वर्तमान समयमें विचार स्वातत्र्यकी वड़ी कदर है । इंग्लेंडके तत्त्ववेत्ता जा रहु भिल्ले कथनानुसार प्रत्येक मनुष्यको अपने विचारोंके प्रगट करनेका अधिकार है । और उनके प्रगट करनेसे मनुष्य सगाजको कुछ न कुछ लाम अवश्य पहुंचता है । मेरे मनमें तरह तरहके विचार उठा करते है पर सूमकी सम्पत्तिकी तरह वे अवतक किसीके उपयोगमें नहीं आते थे—जहाके तहां नष्ट हो जाते थे । पर अब आगे यह न होगा । मिल साहबकी सम्मति से अब मै उदार बनता हूं और अपनी प्रत्येक मौजको सत्यवादिके द्वारा वितरण करनेके लिए मुक्तहस्त होता हू ।

(?)

एक वृढे पण्डितनी वडे पक्के आराधक है । जैन समानमें सैकडीं उटट फेर हो गये—जमाना बद्छ गया, परन्तु उन्होंने अपना जय एक घड़ी भरके छिए भी न छोडा। ' छापेका क्षय ' ' छोपेका क्षय ' करते करते उनकी उमर गुजर गई। छापेके विरोधी देवता भी वड़े विकट निकले। अपने भक्तकी उन्होंने वड़ी कडी जाच की । जब बूढ़े बाबा अपनी सफर तै करनेके अन करीब पहुंच गये, तब कहीं उनके कार्नोंपर जूं रेंगी और वरदान देनेके छिए तैयार हुए I इस समय एकाधा नहीं कई₋देवता उनपर प्रसन्न हो गय है और उनकी एक निष्ठतापर छहूँ है। बूढे बाबा जो कहते है, वे उसी वक्त सिरके वल करनेके लिए तैयार है। अभी वावाने कहा कि महाविद्यालयमें छपे हुए जैनग्रन्थ न पढाये जावें चट देवोंने कहा वहुत ठीक । उधर रत्नमाला नैनगनट आदि देव शक्तिया उनकी आज्ञाकारिणी हो ही रही है । अन वानाको भरोसा हो गया है कि छापेको बहुत जल्दी जैन समाजसे खदे-ड़कर वाहर कर देंगे । मैं समझता था कि इस खबरसे छापेके देवता र्ओंमें वड़ी खलवरी मचेगी, परन्तु यहा देखता हूं तो कुछ नहीं—सब अपने अपने कामोंमें मस्त है। एकसे पूछा तो उसने छापरवाहीसे हँसकर जनान दिया-यह पचमकाल है । इसमें न पुराने देवता ओंकी चलती है और न उनके मक्तोंकी। जैसे शंख देवता वैसे महारांख उनके भक्त । कुछ दिन कूदफाद मचाकर आप ही आप ठंडे हो जायगे । ये वेचारे छापेको क्या खदेडेंगे 2 उनके देवता ओं तककी तो विना छापेकी गति नहीं । तुमने क्या सुना नहीं

है कि रत्नमालाका नवीन प्रेसमें छपनेका प्रनन्थ हो रहा है !

(३)

मेरे एक मित्र कहते थे कि सारी दुनियांमें जितने साप्ताहिक पत्र निकलते है, उनमें शायद एक भी ऐसा न हो, जो जैनगनटकी नरादरीपर विठाया जा सके । मै यह सुनकर जैनगजटके संपादक महारायको एक पत्र लिखना चाहता था कि "आप हिन्दी न जान कर भी सिर्फ़ उर्दृकी लियाकतसे इतना अच्छा पत्रसम्पादन करते हैं । आपकी इस सफलताके लिए मैं बहुत भारी ख़ुशी नाहिर करता हूं।" परन्तु इतनेहींमें जैनगजट अंक ९-१० के दर्शन हुए। मैंने कवरपेजपर ही संपादकका छेख पढ़ा कि " यह जैनगजट सर्वगुण संपन्न है। यह समाजिहतैषी, अनुभवी, दूरदर्शी धर्मात्माओं द्वारा सञ्चालन किया जाता है। यदि आपको अपना मनुष्यभव सफल करना है यदि आपको अपनी सन्तानको सुशिक्षित वनाकर उससे अपने कुलकी कीर्त्ति चिरस्यायी करनी हैं......तो जैनगजटको पढ़िये और पढाइए। " वस, मैंने पत्र लिखनेका विचार छोड़ दिया। जब सम्पादक साह्वको खुद ही अपनी कामयाबीका फक है, तब मैं नाहक क्यों एक पैसा खर्चे करूं। हा, महासभाके दफ्तरमें अलबत्तह एक मुनारिकनादीका खत छिख भेनूंगा।

(8)

प्रान्तिकसभा बम्बईकी सब्नैक्टकमेटीमें जब छापेकी चर्चा उठी और दो एक महाशयोंने उसका बिरोध किया तब कुछ छो-गोंने कहा कि यदि सभा छापेके खि़लाफ है, तो वह-नैनिमन्न क्यों छपवाती है १ इस पर एक पुराने, अनुभवी और धीर वीर सम्यने उटकर कहा—" माइयो, आल्स्यको छोड़ो और अपनी पुरानी एह-पर चले। जैनमित्रका हाथसे लिखवाना क्या वहीं बात है ? जब छापा न था। तब क्या अपने पुरातोंका काम न चलता या। मेरी रायमें जैनामित्र जरूर हाथसे निकलना चाहिए। यह सुनकर मुझे उस चूहेकी बात याद आगई, जिसने बिल्लीके गलेमें एक घंटी बाँच देनेकी तरकांत्र बतलाई थीं।

(9)

महारनपुरके छाछा जम्बूप्रसादनीने दो पंडिर्तोंको रख छोड़े है । वे स्नान करके ट्राद्ध वस्त्र पहन कर दशसे चार वजेतक शास्त्रजी छिखते है । यदि वीचमें पेशाव वगरेहकी हाजत होती है तो उसे रफा करके फिर स्नान करते हैं, तन खिखते हैं। पाटशाद्यके विद्यार्थी मी स्नानादिसे शुद्ध होकर एक खाम वक्तमें जैन शास्त्र पटते हैं ! नैनगजटमें यह समाचार पढ़कर में वहुत ख़ुश हुआ। मेरी रायमें **टाटा साहवको इस विषयमें कुछ और तरक्की करना चाहिए**। विद्यायतमे हिन्दू द्योगोंके द्यिए एक तरहके विस्कुट वनकर आते है। उनके वाक्सपर छिखा रहता है कि 'इसके वनानेमें मनुप्यके हाथ-का स्पर्श नहीं हुआ। ' जब आप शुद्धताकी चरम सीमापर पहुँ-चना चाहते हैं, तंत्र अपने छेलकोंको ऐसा अभ्यास कराइए, निससे लिखते समय अन्यसे उनका स्पर्भ मी न हो । क्योंकि आखिर तो वे अन्य छेखनसे जीविका करनेवाले है-स्नानादिसे कहातक राद्ध हो सकते हे ? विद्यायती कागजोंके समान देशी कागज मी बहुत अशुद्ध होते है, इस टिए पवित्रकागर्जीका तो आपने इन्तजाम कर ही छिया होगा । न किया हो तो अब कर छीनिए और किसी शुद्धा- मायी जैनीको शुद्धकागन वनानेका एक कारखाना खुल्वा दीनिए और वचोंको धर्मप्रन्य पढ़ानेकी झझटमें तो आप पिंड्ये ही नहीं। शैतान वचे कहीं शुद्ध रह सकतें है ! जब आप इस तरह सर्व प्रकार शुद्धताका इन्तजाम करलें, तब अपनी लेखनशालाको किसी प्रदर्शनीमें ले जानेका भी उद्योग करनेसे न चूकें।

(()

दिगम्बरनेनके सम्पादकने वड़ी गलती की नो उसने अपने दीपमालिकांके अकमें नैनगनटके धर्मात्माओंका एक भी चित्र प्रका-शित न किया। नैनगनटका लिखना बहुत दुरस्त है। भला ऐसी नर्वदस्त गलतीपर कीन खामोश रह सकता है। निन सेठों और विद्वानोंकी तारीफ करते करते बड़े बड़े लिक्खाडोंकी कल्में धिसी जाती है और आज जो अपनी सारी शक्तियोंको इस लिए खर्च-कर रहे है कि नैनसमाजको कहीं वर्तमान समयकी उन्नतिका भूत न लग जाने, उनके चित्र नहीं छापना और दूसरे यहां वहाके यहां तक कि विलायत गये हुए वानुओं और भद्वारकों तककी भरती कर देना, यह क्या कोई छोटी मोटी गुश्ताखी है। इसकी सजा उसे जरूर देनी चाहिए और धर्मात्माओंकी मनस्तुष्टिके लिए श्रीमती रत्नमाला या नैनगनटका दीपमाछिकाका खास अंक निकालकर उनके चित्र प्रकाशित करनेका उद्योग करना चाहिए।

मौजी।

सम्पादकीय विचार।

१-- वम्बईमें रथोत्सव।

ता. २९ दिसम्बरसे ता. १ जनवरी तक यहा रथोत्सवकी बहुत चहल पहल रही । रथोत्सव वडे आनन्दके साथ समाप्त होगया । लग भग दो हजार बाहरके सज्जन इस महोत्सवमें सिम्मिलित हुए थे । जैन समाजके प्रायः त्यागी, ब्रह्मचारी, विद्वान, धनिक आदि सभी उपस्थित हुए थे । जैसा समुचित सिम्मलन यहा हुआ था वेसे समागमकी अब बहुत कम आशा है । इस उत्सवके सम्बन्धमें वे बहुत धन्यवादके पात्र है जिन्होंने अपनी धीरतासे काम लिया था । उत्सवके अन्तिम विसर्जनके दिन श्रीयुक्त सेठ गुरुमुखराय मुखानन्दजीकी औरसे प्रीतिभोजन हुआ था । उसमें खण्डेलवाल, अग्रवाल, पद्मावतीपुरवार, परवार, लमेचू, हुमड, चतुर्थ, पञ्चम, सेलवाल आदि सभी जातिके सज्जन सिम्मलन थे ।

१---वम्वई प्रान्तिकसभाका अधिवेशन और उसके सभापति ।

इस रथोत्सवपर प्रान्तिकसभा वम्बईका अधिवेशन होना जव निश्चत हो गया तव इस विपयपर विचार चछा कि अनकी वार अधिवेशनके सभापति कौन निर्वाचित किये जायँ १ रथोत्सव-की प्रवन्धकर्तृसभाके सभासदोंकी रायसे निश्चित किया गया कि अवकी वार अधिवेशनके सभापति छखनउ निवासी श्रीयुक्त बावू अनितप्रसादजी एम. ए. एछ. एछ. वी. वकीछ, निर्वाचित किये बायँ। बावू साहव हमारी समाजके एक प्रतिष्ठित और उदार चिरत सज्जन हैं। इसमें सन्देह नहीं कि वम्बई समाने आपको सभापति निर्वाचित कर बड़े महत्त्वका काम किया। इस आदर्श कार्यके उपलक्षमें वह अवश्य धन्यवादकी पात्र है। क्या हमारी और और सभाएँ प्रान्तिकसभाके इस महत्त्वके कामका अनुकरण कर नैन समाजको उपकृत करेंगी? यह बात अच्छी तरह ध्यानमें रखनी चाहिए कि समाजका हित साधन जितना निःस्वार्थ और उदार चरित विद्वान करेंगे उतना औरोंसे होना असंभव है।

सभापति साहबका आगमन ता. २५ दिसम्बरको हुआ था। उस समय आपके स्वागतके छिए बम्बईके प्राय सभी दिगम्बर नैनसमानके प्रतिष्ठित धनिक सज्जन स्टेशनपर गये थे। वहां-पर आपका बड़े उत्साह और हर्षके साथ पुष्पमाला आदिसे अपूर्व संमान किया गया था। इसके बाद बड़े उत्सव पूर्वक बैण्ड वाजेके साथ साथ आप शहरमें लाये गये थे। उस समयकी शोमाका रमणीय दश्य वास्तवमें दर्शनीय था।

२-सभापातिके न्याख्यानमें इलचल ।

तारील २८ दिसम्बरको समाकी पहली बैठक हुई । श्रीयुक्त प. धन्नालालकीने मङ्गलाचरण कर समाका काम प्रारंभ किया। बाद श्रीयुक्त सेठ हीराचन्द् नेमिचन्दजीके प्रस्ताव करनेपर समा-पतिका चुनाय हुआ। सभापित साहबने सभाकी कृतज्ञता प्रकाशकर अपनी ओजस्विनी वक्तृता आरम की। कुछ व्याख्यान होजानेके बाद जब आपने जातिभेदके सम्बन्धमें कहा कि—" धार्मिकबन्धुओ। इस त्यागी मण्डलकी स्थापनाके साथ २ आपको जातिभेदके अनावश्यक व शास्त्राज्ञाबाह्य बन्धनको भी शनैः २ ढीला करके सर्वथा तोङ्

डालना चाहिए। हमारे शास्त्रोंमें नणीश्रम धर्म्मका छेल है, प्रायश्चि-त्तपाठोंमें भी वर्णोंका ही कथन है; भगवज्जिनसेनाचार्यकृत महा-पुराण भी इसहीकी साक्षी देता है कि आदिब्रह्मा श्रीऋष मदेवने क्षत्रिय वैंदय ओर द्राद्ध यह वर्णत्रय स्थापन किया और तत्पश्चात् उनक पुत्र भरत चक्रवर्तीने बाह्यणवर्ण स्थापन किया । इस प्रकार चार वर्णीका व्यवहार कर्म्मभूमिकी आदिमें प्रारंभ हुआ था। अग्रवाल खंडेलवाल परवार, ओसवाल; हुमड़, रोतवाल आदि भेदोंका उल्लेख कहीं भी नहीं मिलता । और जैसे खण्डेला ग्रामके क्षत्रिय तथा इतर वर्णीय, नैनधर्म अंगीकार करनेवाले खण्डेलवालोंके नामसे विख्यात हुए, राजा अग्रकी सन्तानवाले अग्रवाल कहलाए; इस ही प्रकार अनेक नातियां उत्पन्न हुईं और होती रहती हैं। इक्ष्वाकुवंश, हरिवंश कुरुवंश आदि वंशोंकी उत्पत्ति भी इस ही तरह हुई है। परन्तु नैसी खानापानादि व्यवहारकी संकीर्णता इस समय दिखळाई देती है वैसी पहले कभी नहीं थी । धार्मिक सिद्धान्त और प्रकृतिके अनुसार वर्णाश्रम वन्यनकी आवर्यकता तो प्रतीत होती है; परन्तु जातिभेद तो व्यर्थ उन्नति-बाधक व वात्सल्यचातक जंनीर है। इससे हमारी मूल वर्णाश्रम धर्मिशृंखलाहीका पता जाता रहा । मुझे कोई कारण नहीं विदित होता कि नैनधर्मावलम्बिनी समान वर्णकी जातियाँ परस्परमें रोटीवेटीका व्यवहार क्यों न करें ! न धर्म ही इसको रोकता है और न कोई छौकिक हित ही इससे होता है। जिन जातियोंमें जैनव अजैन दोनों धर्म प्रचलित हैं, उनमें यदि जैनकी अल्प संख्या होती है तो वे अनैनसे विवाह आदि व्यवहार करते हुए बहुत दुःख सहते हैं और उनकी पुत्रियोंको विवश नैनधर्म त्यागना पड़ता है। **अनै**नु

नोंकी पुत्रियां जो उनके घरोंमें आती है वे जैन संस्कारसे शून्य होती हैं, जिससे भावी सन्तान भी जैनत्वशून्य ही रहती हैं। धर्म्भोन्नातिके प्रेमियो ! जरा विचारो कि इस जातिवन्धनसे धर्मीको कितनी हानि पहुँची है इसे हठ और हानिकारक रूढ़ि न कहें तो क्या कहा जावे 2 अतः यदि आप धम्मोंत्रातिके इच्छुक है तो वर्णाश्रम धर्म्मको दृढ कीजिए और जातिबन्धनको उच्छेद कर नैनधर्मकी वात्सल्य डोर्से नैनजातिको बलिष्ठ करनेका उद्योग कीजिए-आदि ।" यह अंदा हमारे बहुतसे भोले भाइयाका बुरा जान पड़ा । उन्होंने शास्त्रकी मर्यादा और जातिके हानि लाभकी कुछ परवा न कर एक दम ज्ञोर मचा दिया । संभव है, उन्हें अपनी रुढ़िके सामने इस महत्त्वपूर्ण वातकी कुछ कीमत न जची हो! पर उन्हें इतना विचार तो अवश्य करना चाहिए था कि-समा-जका प्रतिष्ठित विद्वान जो वात अपने मुहॅसे कहेगा वह वहुत ही विचार और अनुभवके साथ। उसे अपने समाजकी वर्तमान परिस्थितिनर वड़ा भारी विचार रखना पडता है। उसमें भी अप-ठित और वहुत दिनोंसे अज्ञानके गड्डेमें जो समाज गिरा हुआ है उसकी स्थितिपर तो और भी अधिक । फिर उसके द्वारा क्या हमें किसी प्रकार धका पहुच सकता है 2 जो स्वयं समाजकी सेवा करता है और उसके उन्नत करनेकी कोशिश करता है वह क्या उसका अहित भी चाहेगा ? इतनेप्र भी यदि उसके विचार हमारे शास्त्रोंसे मिल जावें तब तो हमें वे मानलेने चाहिएं। यदि वे इसपर विचार करते और आदिपुराण सरिवे आर्धग्रन्थकी मर्यादाका कुछ गौरव करते तो कभी उन्हें इस हलचलके करनेकी

त्तकछीफ न उठानी पड़ती। अस्तु। उन्होंने निस विषयके छिए इतनी हलचल मचाई-आन्दोलन किया-प्रन्तु आश्चर्य है कि तब भी वे अपनी रूढिका पाछन नहीं कर सके-उसे सुरक्षित नहीं रख सके। उन्हें जरूरी था कि वे स्वय तो अपनी रूढिका पाछन करते? यदि वे जैनियोंमें परस्परके जातिभेदको अच्छा समझते है और उससे अपनी उन्नति समझते है अथवा यों कहलो कि वे इतनी उदारता दिखळाना नहीं चाहते कि जिससे जातिमें प्रेमका संचार हो तो क्या वे मुझे इस वातका उत्तर देकर अनुग्रहीत कर सकते है कि जिस समय सेठ सुखानन्दजीने सनका भोजन सत्कार किया था, उस समय हमारे जातिभदको चाहनेवाले—खण्डेलवाल, अग्रवाल, परवार, पद्मावतीपुरवार, हूमड, चतुर्थ, पञ्चम, सेतवाल, लमेचू आदि जात नालोंके साथ क्यो जीम गये १ वे समझार्वे तो कि नानू अजितप्रसादजीने जब यही बात कही तब तो वे उखड़ खडे हुए थे और स्वय अपनी भूलपर उन्हें कुछ विचार नहीं हुआ विचा यही विचारशीलता है ? पर वास्तवमें वात क्या थी वक्यों इतनी हलचल की गई थी व इस विषयका जहातक हमने अनुसन्धान किया है उससे जान पडा कि यह कर्तन्य-यह हलचल मचाना-हमारे इन भोले भाइयोंकी बुद्धिका नहीं था। उनकी स्टीमके भरनेवाले नो दूसरे ही थे। उन्हीं— की क़ुपासे यह आन्दोलन उठाया गया था। इस लिए इस भूलके करनेवाले वे नहीं कहे जा सकते । तत्र साहाजिक प्रश्न उठेगा कि -यह सन कार्रवाई किसकी थी ² उत्तरमें हम अधिक न छिलकर पाठकोंको कुछ इशारा किये देते है। उसपर वे स्वय विचार करें । हमारे कितने जातिभाइयोंको वम्बईप्रान्तिकसभाके

अधिवेशनके होनेकी खबरसे एक प्रकारका मय हो गया था। भय क्यों ? यह एक विषम समस्या है। यद्यपि हम यह अच्छी तरह जानते हैं कि इस समस्याका हल करना अपने ऊपर एक वल लेकर अपनेको अपराधी बनाना है, परन्तु तब भी अनुरोध वश कहना पड़ता है।

मथुरामें महासभाका जो अधिवेशन हुआ था, उसे हमारे पाठक भूले न होंगे । उसमे मनपानी जो जो कार्रवाइयांकी गई वे सवपर विदित है । उसके नवीन कार्यकत्तीओंने सत्रसे वड़ी यह भूछ की है कि उन्होंने उन छोगोंको, जिन्होंने अपने मुख दुःख, हानि लाभकी कुछ परवा न कर महासभाकी पूर्ण रूपसे निप्काम सेवा की थी, अलग कर दिये है । हम नहीं जानते उनका क्या अप-राध था ? कौनसी उन्होंने महासभाको हानि पहुँचाई थी ! जिससे वे सभासे अलग किये गये । किस लिये महासभाने यह अन्याय किया 2 क्या महासभाके कार्यकर्त्ता इसका समुचित उत्तर देकर अपने ऊप-रसे इस दोषके हटानेकी कोशिश करेंगे ? देशकी जितनी संस्थाएं है उनमें तो कामके करनेवार्छोंकी जरूरत रहती है पर महासभा उल्टा काम करनेवाळोंको अपनेसे अलग करती है, यह क्यो ? इसके गूढ़ रहस्य पर विचार कर यदि इस यह कहें कि सचमुच महासभा अब समस्त जैनियोंकी महासभा न रही तो कुछ अनुचित न हे।गा । क्योंकि अन उसे एक नया ही जामा पहाराया गया है। इसके अतिरिक्त नियमावलीका अनियम उलट फेर आदि और भी कितनी वार्ते मनमानी की गई थीं । संभव था कि महासभाकी इस मनमानी कार्रवाईका इस अधिवेशनमें प्रातिवाद किया जाता !

इसी विचारने उन्हें मयवान बना दिया था। इसका उन्हें पूर्ण खटका था। उसपर भी ऐसे समयमें जन कि वानू अनितप्रसादनी सरीखे स्वाधीनचेता उसके सभापित हों। संभव है, पाठक हमारी इस कल्पनाका विश्वास न करें पर हम उन्हें विश्वास दिखाते हैं कि यह बात विल्कुछ सत्य है। उन छोगोंके यहां कई छोगोंके पास पत्र आये थे। उनमें उन्होंने छिता था कि " आपको इस विपय-का पूर्ण घ्यान रखना चाहिए कि हमारे विरुद्ध वहां कुछ कार्रवाई न की जाय, न महासभाके सम्बन्धमें कोई बात उठाई जाय और न उसकी किमी कार्रवाईका प्रतिवाद किया जाय। इसका मार सब आपके उपर है—आदि।"

वे छोग केवल पत्र लिखकर ही चुप न होगये। होनें क्यों, उन्हें तो इस विषयकी वडी भारी चिन्ता होगई थी न १ इसिल्ये उन्हें और भी इसकाममें आगे वड़ना पडा। उन्होंने कुछ आदिमियोंको, जो कि अपनी खुशामद करनेवाले थे, अधिवेशनकी हर तरहसे असफलना होनेके लिए यहा भेजे। वे आये और उन्होंने जहांतक अपनेसे हो सका अधिवेशनकी असफलताके लिये प्रयन किया। भोले लोगोंको भटी बुरी सुझाकर उन्हें अपनी ओर शामिल किये। सचमुच जिन लोगोंकों संसारकी प्रगतिका कुछभी परिज्ञान नहीं है, जिन्हें उन्नति और अवनति एक सरीखी जान पड़ती है, अग्नी भलाई के सिवा जिन्हें कभी यह ख्याल नहीं होता कि हमारी जातिकी आज कैसी भयानक स्थिति होगई है ? उनका ऐसे कार्योंमें सहायता देना कुछ आश्चर्यकी वात नहीं है। इसका खया- छ तो उन्हें हो सकता है जो जातिकी अवनतिको अपनी अवनित

और उन्नितको अपनी उन्नित समझते हैं । यही कारण है कि उनका चक्र हमारे भोले भाईयोंपर चल गया । इसका जो परिणाम हुआ उसका हम पहले उद्धेल कर आये है। सन कुछ हुआ । अधि-वशनकी असफलताके लिए कोई बात उठा न रक्ली गई। पर तन भी हमारी समझके अनुसार वे कुछ भी सफलता प्राप्त नहीं कर सके । हां उनके इस असामयिक अविचारसे इतना लाम जरूर हुआ कि काम करनेवाले सज्जनोंमें एक नवीन शक्तिने अवतार ले लिया । पाठक थोड़े दिनों वाद जान सकेंगे कि यह शक्ति कितना काम करेगी ?

४-कायरता।

हमें विश्वास था कि वम्बईसभाके उत्साही कार्यकर्ता अपना कार्य पूर्ण उत्साहके साथ करेंगे। उसमें किसी तरहकी कमी न आने देंगे। पर ता० २९ की मैनेजिंगकमेटीकी वैठकमें उनके उत्साहका हमें पूर्ण परिचय मिछ गया। कुछ ही विरुद्ध पुरुपोंका उनपर ऐसा प्रभाव पड़ा कि वे उस समय साधारण प्रस्तावोंके अति-रिक्त कुछ भी महत्त्वके प्रस्ताव पास नहीं करने पाये। हम नहीं जानते कि जातीय काम इतनी डरपोंकतासे किये जाते है। वे छोग वड़ी मूछ करते हैं जो सामाजिक कार्मोको अपमानके मयसे विरोधी छोगोंकी रुचिके अनुसार करते है। उन्हें अपने पूर्व पुरु- विरोधी छोगोंकी रुचिके अनुसार करते है। उन्हें अपने पूर्व पुरु- विरोधी छोगोंकी रुचिके अनुसार करते है। उन्हें अपने पूर्व पुरु- विरोधी छोगोंकी रुचिके अनुसार करते है। उन्हें अपने पूर्व पुरु- विरोधी छोगोंकी रुचिके अनुसार करते है। उन्हें अपने पूर्व पुरु- विरोधी छोगोंकी रुचिके अनुसार करते है। उन्हें अपने पूर्व पुरु- विरोधी छोगोंकी रुचिके अनुसार करते है। उन्हों अपने पूर्व पुरु- विरोधी छोगोंकी रुचिके अनुसार करते है। उन्होंने अपने जीवनको भी कुछ पहीं गिना था। फिर जरासे अपमानसे हममें इतनी कायरता, इतनी असामध्ये क्यों ! सच मुच उनकी यह भीरुता देखकर आश्चर्य

हुए विना नहीं रहता । जैनसमाज अभी अज्ञानके गड्ढेमें वहुत गिरा हुआ है । उससे ऊद्धार करनेमें वडी कठिनाइया सहनी होंगीं । रूढिके गुलामोंके विरुद्ध आन्दोलन करना पढेगा । उनकी गालिया सुननी पढेंगीं । तिरस्कार सहना होगा । तव कहीं आप अपना अभिष्ट लाभ कर सकेंगे । यदि आपमें यह शक्ति है, और सच्चे हृदयसे आप समाजका उद्धार करना चाहते है तो इस भीरुताको जलाजिल दे डालिए । मानापमानको पास तक फटकने न टीजिए । हम विश्वासके साथ कहते है कि आप उस हालतमें वहुत कुछ समाजका हित कर सकेंगे । और यदि इतनी सहनशीलता—अकायरता—नहीं है तो घरमें वैठ जाइये । कायरोंसे दूसरोंका हित नहीं हो सकता । देशका तथा जातिका कल्याण उसी महात्माके द्वारा होगा जो अपने जीवनकी कुछ परवा न कर लोकहितमें लगेगा । भारतवर्षका इतिहास ऐसे वीरेंसे भरा हुआ पडा है । हमें भी उन्हीं महात्माओंसे आत्मसमर्पण करना सीखना चाहिए ।

५---नवीन शक्तिका अवतार।

यह वात स्वाभाविक है कि उन्नाति संसारमें जन पुरानी शक्तियां हीली हो जाती है और उनमें काम करनेकी हिम्मत नहीं रहती। अथवा वे कायरतासे अपनेको कार्यक्षेत्रमें आगे नहीं बढा सकतीं तन नियमसे नवीन शक्तिका प्राप्तुमीन होता है। जैन समाजके प्रघान नेता मगनान् समन्तमद्र और अकलक आदि निष्काम योगियोंका ऐसे ही समयमें अनतार हुआ था। उस समय उनके द्वारा नैसी जैनधर्मकी प्रगति हुई थी वह किसीपर अविदित नहीं है। ठीक वही समय आज हमारे लिए फिर आ उपस्थित हुआ है।

इमारे ख़ूनकी तेजी बहुत शीतल हो गई है। यहां तक कि इम अपने आप तकको मूल गये है और धीरे धीरे नीचेकी ओर चले जा रहे हैं । अज्ञानकी असीम राज्यसत्ताने हमें परवश और अपना गुलाम बना लिया है । इस हालतसे हमारा उद्धार होनेके लिए अब नवीन शक्तिके अवतारकी जररूत है। क्योंकि जिन पुरानी शक्तियोंके ऊपर हमें भरोसा था-अपने उद्धा-रका पूर्ण विश्वास था—उनमें कुछ तो कछुवेकी तरह मन्द मन्द चलनेमें ही अपना भला समझती है और कुछ ऐसी है जिनमें स्वार्थियों, मायावियों, समाजके रात्रुओंकी ही अधिक भरती होगई है। इससे अत्र उनपर विश्वास रखना—उनसे भलाईकी आशा करना—निष्फल नान पड़ता है। यद्यपि ऐसी महाशक्तिके उद्भव होनेमें अभी वहुत कुछ विलम्ब है, परन्तु फिर भी यह लिखते वडी खुशी होती है कि वहुतसे विद्वान् और समाजकी निष्काम सेवा करनेवालोंकी एक मण्डली सगिटत होगई है । उसका नाम दिगम्वरनैनमहामण्डल है। इसका उद्देश्य देश विदेशों नैनधर्मका प्रचार करना है। इसके द्वारा एक साप्ताहिक पत्रका भी जन्म होना निश्चित हो चुका है । पत्रका नाम जैनभानु होगा । इसका पालन-सम्पादन-हमारी जातिके अपूर्व िद्वद्रत्न स्या० वा० न्यायवाचस्पति प० गोपालदाप्तजीके द्वारा होगा। परमात्मासे इस मण्डलके कर्मवीर होनेकी प्रार्थना करते है। इस नवीन शक्तिके द्वारा बहुत कुछ समानसुधारकी आशा की जाती है।

६-आत्मपतन ।

मनुष्य चाहे मूर्व हो अथवा पढ़ा लिखा, वह स्वार्थसे अपनेको कहा तक गिरा सकता है, कहां तक लोगोंकी दृष्टिमें घृणास्पद वना- छेता है, इसका बहुत कुछ प्रतिभास वम्बईसभाके अधिवेशनमें हुआ है। पहछे विश्वास तो यह था कि मनुप्य चाहे कितना ही स्वार्थी क्यों न हो तब भी वह अपने स्वार्थके छिए, स्वार्थ भी केवल इतना ही कि हमारे अन्नदाता हमसे खुश रहें, बड़े भारी जन समुदायका अहित न करेगा। परंतु अब वह विश्वास नहीं रहा। उसके स्थानमें यह श्रद्धा जम गई कि पैसेका गुलाम, चाहे वह पढ़ा छिला ही क्यों न हो, अधमसे अधम काम भी कर सकता है। अपनी तुच्छाति-तुच्छ मिलन वासनाके छिए अपनी जातिका, अपने देशका अकल्याण कर सकता है। उनकी उन्नतिके कारणोंको धूलमें मिलानेकी जी जानसे चेष्टा करनेके छिए उतारु हो जाता है। ऐसे मनुप्योंको यदि हम समाज और देशके दुश्मन कहें तो कुछ अनुचित नहीं जान पड़ता।

जनसे अभागे जैन समाजमें दस्मे और वीसोंके झगडेने अवतार छिया है तनहींसे कुछ छोगोंने उमे जातीय झगडेका जामा पहराकर बहुत कुछ आन्दोलन करना आरम किया है । इसका परिणाम समाजके छिए कैसा हुआ इससे सन परिचित है । महा सभाने, जो भारत वर्षके सन जैनियोंके हितके छिए स्थापित हुई थी, प्रादेशिक रूप धारण कर छिया है । और अन वह कुछ गिनतींके छोगोंकी सभा गिनी जाने छगी है । कई धार्मिक संस्थाए जो समाजमें विद्यावृद्धिके छिए स्थापित है और अपनी शक्तिके माफिक समाज सेवा कर रही है वे कुछ अनुदार हृदयी पुरुषाको काटेकी तरह चुम रहीं है । उनकी अभिवृद्धि उन्हें सुहाती नहीं है । क्यों व यह वतलाना अपनेको अपराधी बनाकर गालिया सुननेका पात्र बनाना है । सामाजिक पत्र, जिनका उद्देश्य—कर्त्तन्य-

समाज सुवार है, वे आज किस ख़ूत्रीमे-कैसे पाण्डित्यके साथ-सम्पादित किए जाते है यह बतलानेको हम लाचार है। समझदार पाटक स्वयं समझते हैं । हमारे अभागे समाजमें पत्र सम्पादनका यही मतल्ब समझा गया है कि उनके कलेवर किसी तरह काले हो जाने चाहिएँ। फिर चाहे उनेम अच्छे अच्छे हेख न हो, उनसे किसीका हित न होता हो, समानमें उलटा उनसे बुराई होती हो, भले ही उनके द्वारा अपनी अघम मनोवृत्तिया खुरा करनेके लिए दूसरेकी निन्दा की नाती हो, दूसरोंको मनमानी गालियां दी नाती हो, उनसे कुछ भी हानि नहीं समझी नाती। हमें प्रमंग पाकर हिखना पड़ता है कि हमारी जातिके एक प्रतिष्ठित नेताने एक मान्य पत्रके संपादकको टम वातकी चेतावनी की थी कि आप अमुक पत्रके साथ ही अपने लड़ाई झगड़ेका सम्बन्ध रक्तें हम अमुक पत्रको इस विषयसे निष्कः लक रखना चाहते है। परन्तु यह लिखना उनका एक समझदार-की आर्खीमें चूल डाल्नेंके मानिन्द था और बिल्कुल बनावटी था। यदि यह बात उन्होंने शुद्ध हृद्यमें हिखी होती तो क्या वे अपने-को उसी कलकसे न बचाते १ क्यों वे स्वयं घृणित वासनाके दास वनकर अपनी छेखनीका दुरुपयोग करने छगते ? छि: समाजके हितैपीपनेकी डींग मारनेवाले इतने वड़े नेताके छिए यह वड़ी भारी लज्जाकी बात है। सच है पर उपदेश कुशल बहुतेरे दूसरोंके दोष सब दिखा सकते है पर अपने दोषोंपर किसीकी दृष्टि नहीं पड़नी । परन्तु यह मनुष्यता नहीं है ।

इस समय हमारी जातिमें जितनी बुराइयां पैदा हो रही है, वेः सब स्वार्थकी वासनासे मछीन और संकीर्ण हृदयी पुरुषोंकी कृपाकाः फल है। वे अपने व्यक्ति गत द्वेपको भी समानकी छातीपर पटक कर उसके सर्व नाशके छिए कोई वात उठा नहीं रखते और फिर उस अकर्तन्यको वे सफलता समझते है। पर यह सफलता ऐसी ही है कि वुराई करके उसे अज्ञानतासे भलाई समझना । वुद्धिमान् इस सफलताका आदर नहीं करते। किन्तु उसे घृणाकी दृष्टिसे देखते है। हा इस हलचलसे इतना तो अवस्य हुआ कि ऐसे बडे समारोहमें बम्बईसभाके लिए कुछ द्रन्य संचित हो जाता, अथवा बाहरकी संस्थाओंके ।लिए भी कुछ सहायता मिल जाती, वह इन जासूओंकी समाजपर सुदृष्टि रहनेसे न होने पाई । धार्मिक कार्योंमें दान देकर—उन्हें सहायता पहुचा कर—जो हमारे भाई पुण्य सम्पादन करते उसे इन श्रीचरणोंने अपनी वीरतासे खूव हगाम मचाकर सम्पादन न करने दिया और उस श्रेयके बद्हेमें एक नवीन श्रेय स्वय सम्पादन कर लिया । मनुष्य स्वार्थक पाशमें बद्ध होकर कितना अन्याय कर सकता है, कहा तक अपने आत्माको गिरा सकता है यह हमने भी ख़ूव जान लिया । और साथ ही यह विश्वास कर लिया कि स्वार्थसे—तुच्छातितुच्छ स्वार्थसे—अपने अनन्त शक्तिशाली आत्मा-को नीचेसे नीचे गिराने वाले पैसेके गुलाम और सकार्ण हृदयी पुरु-मोंकी हमारी जातिमें कमी नहीं है। पैसे ! तू घन्य ! तेरे गुलाम सब कुछ करनेको तैयार रहते है। इसी लिए तुझे धन्यवाद देन गड़ता है। अधिक क्या मूर्ख तो तेरी गुलामी करते ही है, परन्तु ाढ़े लिखे, बुराई और मलाईको जानने वाले विद्वान् भी तेरे अनन्य ग़स होते दीख पड़ते है। तेरी कृपासे जो कुछ हो वह थोड़ा है। अस्तु।

७-श्रीमन्धरस्वामीके नाम खुली चिंहियां।

हमने इस अङ्कासे उक्त शीर्षककी चिट्टियां प्रकाशित करना आरंभ की है। इन चिट्टियों के छेलक श्रीयुक्त वाडी छाछ मोती छाछ शाह हैं। आप नैनसमाजमें एक स्वतंत्र और उदारचरित छेलक है। आपके विषयमें हम अधिक क्या कहें, निन्होंने आपके द्वारा सम्पादित जैनसमाचार और नैनहितेच्छु पत्र पढ़े हैं, वे आपकी योग्यता और विद्वत्ताका अनुमान स्वयं कर सकते है। इसके अति-रिक्त ये चिट्टियां भी आपकी प्रतिभाशाछिनी बुद्धिका परिचय करा सकती है। इन चिट्टियों को छिलकर आपने नैनसमाजको बहुत कुछ सचेत किया है।

इनमें जैनसमानके अध पतित अवस्थाका चित्र वड़ी मार्मिकतासे अद्वित किया गया है । पहनेसे हृदयपर एक गहरी चींट लगती है। प्रकाशित चिट्ठीको पढकर पाठक स्वय अनुभव कर सकेंगे । जातिकी दशाका ज्ञान करानेके लिए हम कमसे इन्हें प्रकाशित करेंगे । हमारी जातिकी इस समय वड़ी बुरी हालत हो रही है । हमें आशा है कि जातिके शुभिचन्तक अपनी पतित अवस्थापर अवश्य ध्यान देकर उसके उद्धारका उपाय करेंगे ।

हमें यह जानकर वहा दु:ख हुआ कि उक्त महानुभावने समाज सेवासे अपना हाथ खींच ित्या है। इसमें सन्देह नहीं कि इसका कुछ कारण अवस्य है। पर हम यह कहना भी अनुचित नहीं समझते कि जातिको आप सरीखे नररत्नोंकी वड़ा भारी जरूरत है। आप सरीखे स्वाधीनचेताहीके द्वारा जातिका भविष्य अच्छा वन सकेगा। हम आशा करते है कि आप हमारी प्रार्थनापर ध्यान देंगे।

८-क्या जैनसमाजका सुधार होगा ?

एक ओर तो इसके शुभिन्तकोंका यह प्रयत्न चल रहा है कि नैनसमान एकताके पिन्न नन्धनमें नधकर अपने लिए उन्नतिन। मार्ग सरल करे और दूसरी और कुछ कुल्कलंक इसे और भी पितत करना चाहते है। वे दिनपर दिन इसके उन्नतिके मार्गको निषम बना रहे है। नहा देखो वहां आपसमं—भाई भाईमें—साधारण साधारण बातोंके लिए ईपी और द्वेपकी आग्ने भड़काना चाहते है। एक स्थान ऐसा है नहा मिलकर और शान्तिके साथ काम किया जाय तो उससे किसीकी हानि नहीं होती और न द्रव्य और समयका दुरुपयोग होता है। पर न जाने यह शान्ति उन्हें क्यों अच्छी नहीं लगती है। क्यों उन्हें एक एक दानेके लिए ठोकरें खाते फिरते अपने भाइयोंपर दया न आकर अदालतों में लाखों और करोंडों रुपयोंपर पानी फेरना अच्छा जान पड़ता है। क्यों वे अपने ऋपियोंके—

" स्वयूथ्यान्प्रति सद्भावसनाथोपैतकैतवा । प्रतिपत्तिर्यथायोग्य वात्सल्यमाभिछप्यते ॥

अपने भाइयोंके साथ छल्ल-क्रपट-रहित पवित्र भावोंसे प्रेम करना चाहिए, इन पवित्र वचनोंको भूल गये ² क्यों छन्हें अपनी इस भूल-पर खेद नहीं होता ²

पाउक ! आपने पढ़ा होगा कि सम्मेदिशाखरपर्वतपर अपना हक्क सिद्ध करनेके छिए हमारे कुछ श्वेताम्बरी भाइयोंने दिगम्बरियोंपर मुकहमा चलाया है। हमें इसमें पूर्ण संदेह है कि वह पर्वत केवल श्वेताम्बरियों अथवा केवलं दिगम्बरियोंके हाथमें आकर उसपर एकका मौरुसी हक

होजाय ? पर हा इतना अवस्य होगा कि दोनों ओरका बहुतसा रुपया ते वरवाद हो चुका है और अभी वहुत होना है । इसीके लिए यह मुकद्दमें बाजीका नवीन सूत्रपात हुआ है। देखते है,हमारे श्वेताम्बर भाई लाखोंपर पानी फेरकर कितनी सफलता प्राप्त करते है। क्या ही अच्छा होता यदि वे अपने दुखी भाइयोंके लिए इस धनका सदुपयोग करते १ आज जैनसमाज दिनपर दिन अज्ञानके गहेंमें गिरता चल जा रहा है, उसका उद्धार करते ! यदि हम थोड़ी देरके लिए इस असत्य ही कल्पनाको सत्य समझलें कि पर्वत श्वेताम्बरियोंको पिल गया तो क्या उससे सब श्वेताम्बरी मोक्ष चले नार्वेगे और फिर दिगम्बरियोंको कभी मोक्ष मिलेगा ही नहीं 2 यह कितने खेद की वात है कि एक ओर तो जैनधर्मकी इतनी उटारता कि वह संसार भरको अपने उदर्भे रखनेकी शक्ति रखता है ओर दूसरी ओर उसके धारकोमें इतनी अनुदारता-इतनी संकीर्णता-कि वे सर्व मान्य स्थानको केवल अपना ही आराध्य बनाना चाहते है ? यह तो वही हुआ कि किसी जैनधर्म स्वीकार करनेवाले अन्यमतीको यह कहना कि जैनधर्मक ग्रहण करनेका तुम्हें कुछ अधिकार नहीं है। वह हमारी मौरुसी सम्पत्ति है। पर यह समझ मूलभरी है। और इसीसे हमारी जातिका सर्वनाज्ञ हुआ है। अत्र हमें इन झगडोंका समानसे काला मुहँ करना चाहिए। हमारे पास पैसा बहुत है तो उसे इस-तरह व्यर्थ नष्ट न कर उसका हमें सदुषयोग करना चाहिए। जरा जातिकी हालत देखनेके लिए आखें खोलो, तब जान पड़ेगा कि हम इसी पिशाचिनी फूटसे मीतर ही भीतर कैसे घुने जा रहे है। जैनधर्म शान्ति· मय धर्म है। पर आश्चर्य है कि हम उस शान्तिको—प्यारी शान्तिको—भूले

जा रहे हैं ! वह दिन जैनियों के छिये कितना उत्तम होता जिस दिन उनका घन इन मुक्दमों के द्वाग आमिषभोजियों के पेटमें न पड़कर-उमसे हिंसाका प्रचार न होकर—जातिक छिए ध्यय होता । जातिमें विद्यामंदिर और जिनवाणीभवन आदिकी स्थापना होती और उनके द्वारा जानिमें नई शक्ति पेदा होती ! यही सब देखकर प्रश्न उटता है कि वया जनसमाजका उद्धार होगा !

स्वीशिक्षा।

यदि हम यह कहें कि देश और जातिकी उन्नति ख्रीशिकानर निर्भर है तो कुछ अनुचित न कहा जा सकेगा। र्न्नाशिक्षाका किनन महत्त्व है यह शब्दोंक द्वारा ममझाना किन है। ममारके प्रायम्भी प्रायद्ध विद्वानीन यह बात मुक्तकण्डसे स्वीकार की है कि जिम देशमें. जिम जातिम और जिम राहमें र्न्नाशिक्षाका प्रचार नहीं है वह देश, वह जानि और वह राह कभी उन्नत नहीं हो सकते। भारतका जो आज सीमान्त अब पत हो गया है उमका प्रधान कारण र्न्नाशिक्षाका भी अभाव है। और जबतक इसका यथेष्ट प्रचार न होगा तहतक पतित भारत उन्नत होगा यह संभव नहीं।

डमे केर्ड अस्वीकार नहीं कर मकता कि मूर्ज क्रीके द्वारा समाज या देशको किसी तरहका भी छाभ नहीं पहुच सकता। और तो क्या जब वह सन्तानपाछन, गृह प्रबन्व आदि जरूरी कार्मोका भी पाछन अच्छी तरह नहीं कर सकती तब उसके द्वारा किसी भारी महत्वके कामका मन्यादन किया जाना कैसे संभव माना जा सकता है? उसे खयं इस बातका ज्ञान नहीं है कि मेरा कर्तव्य क्या है?

मुझे किस मार्गपर चलनेसे लाभ होगा? तब वह क्या अपना, क्या अपनी सतानका और क्या अपने घरका सुधार कर सकेगी! यह कौन नहीं जानता की स्त्रीशिक्षाके न होनेसे भारतकी जातियां दिनपर दिन कैसी कैसी भयंकर कुरीतियोंका घर बनी जा रहीं हैं। क्या यह कभी सभव था कि नहांकी भूमिको सीता, मैनासुन्दरी, अञ्जना, द्रौपदी, मनोरमा आदि देवियोंने भूपित की थी-अपने चरणोंसे पवित्र की थी-वहाकी स्त्रिया अत्र ऐसी उत्पन्न होंगी कि वे स्वार्थके वश हों अपनी प्यारी पुत्रियोंको बूढे, मूर्ख, कुरूप आदिके गले वाधकर उनके सुखमार्गमे काटे वनेगी ? पर यह सब इसी एक स्त्रीशिक्षाके न होनेका प्रभाव है। आरे इसीसे उन्हें अपना हानि लाभ नहीं सूझ पड़ता । इस लिए क्यों यह जरूरी नहीं माना जाय कि स्त्रीशिक्षाकी बड़ी जरूरत है और दहुत वर्डी नरूरत है। स्त्री पतिकी अर्द्धोगिनी मानी नाती है, पर यह याद रहे कि अनपढ़ी स्त्री अद्धीद्गिनी कभी नहीं हो सकती। क्योंकि उसके द्वारा कीसी तरहकी मदद पतिको नहीं मिछती है। विना विद्याके स्त्री सिवाय रोटी वनाने और पानी भरनेके किसी कामकी नहीं होती । उसे यदि इनके सिवा कुछ काम भी सूझता है तो वह दूसरींकी निंदा करनेका । चार निउल्ली औरतें शामिल बैठकर इघर उघरकी निंदा करना अपना काम समझती हैं और जो इस कामको जियादह खूनीसे करती है वही इनमें चौधरानी समझी जाती है। ये मदिरमें दर्शन करने और शास्त्र मुनने जाती हैं परन्तु चित्त निन्दामय होने-के कार ग न हृदयसे वे दुर्शन कर सकती है और न शास्त्रके उपदेश को ही हृदयमें जमा सकती है। ऐसी सूरतमें जैसा कुछ पुन्यफल मिलना चाहिए वह नहीं मिलता, क्या इन बातोंके सुनने पर भी यह संदेह

रह जाता है कि स्रीशिक्षा न होनी चाहिए। और और देशोंकी क्षियां कितने उंचे दरजेपर पहुच गई हैं कि जिन्हें देखकर प्रत्येक स्त्रीशिक्षाका प्रेमी प्रसन्न हो सकता है। उनके खिले हुए आज हजारों अच्छे अच्छे ग्रंथ है जिन्हें देख कर अच्छे अच्छे विद्वान् आश्चर्य प्रगट करते हैं। मारतकी नारियां मी अपने-में वही शक्ति रखती है, परन्तु बुरा हो इस अविद्याका जिसने उनकी शक्तिको दक दिया है। प्रत्येक देशिहतैपीको सबसे पहछे स्त्रीशिक्षापर अच्छी तरह ध्यान देना चाहिए। सब मुक्क-जग गये हैं। जापान स्वर्गमूमिके समान सुख भोग रहा है। चीनने भी अपनी पिनक छोड़दी है। पर भारत—जगद्गुरुभारत—ही आज सबसे पीछे पड़ा हुआ है। क्यों किवछ शिक्षाके न रहने-से। प्यारे। अब इस बातकी आवश्यका है कि स्त्रीशिक्षाका खूब प्रचार किया जाय।

खियोंको शिला मिछनेसे कितना जल्दी सुघार होता है इस बातको वे छोग बहुत अच्छी तरहसे जान सकेंगे जिन्होंकी निगाह चीनको देखती रही है । आजसे दश वर्ष पहछे चीनमें न समाजकी तरफसे और न सरकारकी ही तरफसे खिबोंके छिये स्कूछ या काछेज था। पर इस दश वर्षके असेंमें उन्हों-के खीशिलाके प्रचारसे आज चीनके केवछ एक प्रातमें ७१२ पाठशाछा और कई एक काछेज स्थापित हैं। उनमे खियोंको इतिहास, साहित्य, गणित, सन्तानपाछन, कछा-कौशछ आदि सभी विषयोंकी शिलादी जाती है। उसीका आज यह फछ दीख पड़ता है कि वहां की खियां संसारमें वह काम कर रहीं है जो आश्चर्यमें हुबोये देता है। न जाने ऐसा पवित्र दिन मारतके छिए कन आवेगा जब भारतकी स्त्रियां मी अपने कामसे संसारको मुग्ध करने लगेंगी ?

भारतके प्यारे पुत्री ! अत्र तो अपने देशकी परिस्थितिपर ध्यान दो । वह बहुत दिनोंसे गिरता ही चला जा रहा है । सबसे पहले उसके लिए तुम्हारा कर्त्तव्य है कि जैसे उसकी प्यारी पुत्रियां पढ़ लिखकर उसकी सेवा करनेके लिए तैयार होने लों, वैसा ही तुम काम करो ।

स्त्रीशिक्षाका मेमी-माणिकचन्द सेठी झाळरापाटन ।

पुस्तक-समालोचन।

भर्मभित्तर—मूलप्रन्थ सकलकीर्त्ति महारकका बनाया हुआ है। हिन्दी पं. लालारामजीने की है। पं. पत्नालालजी वाकलीवालके द्वारा प्रकाशित किया गया है। कीमत दोनों खण्डकी २) है। मिलनेका पता पं. पन्नालालजी वाकलीवाल वि. मैदाग्नि जैनमन्दिर बनारस सिटी।

सारे अन्यमें प्रश्नोत्तरके द्वारा धार्मिक विषय बड़ी ख़ूबीसे सम-आया गया है। समझानेकी प्रणाली सरल है। हर एक विषय बड़ी जल्दी समझमें आ सकता है। अन्य नैनियोंके बहुत कामका है। अच्छा होता यदि प्रकाशक पंडितजी भाषाके साथ साथ मूलअन्य-कर्त्ताकी सरल संस्कृत भी लगा देते। अन्य मोटे कागजपर मुन्दरताके साथ लगा है। दिगम्बरजन—म्रतमे इस नामका गुजराती भाषामें कोई पांच वर्षसे एक पत्र निकळता है। उनके सम्पादक श्रीयुक्त मूडचन्द्र किसनदाम कापिड़िया हैं। वार्षिक मूख्य उपहारके ग्रन्य सहित १॥) हैं।

छटे वर्षके आरंभमें कापिड़ियानीने इसका खास अङ्क निकाछा है। वह हमारे सामने उपस्थित है। उपयोगी छेखोंके अतिरिक्त स्यानी, मुनि, विद्वान, और सदृहस्योंके छग मग ६० चित्र मी दिये गये हैं। अङ्ककी सुन्दरता देखते ही बनती है। दिगम्बर जैन समानमें इस प्राथमिक और नवीन परिश्रमके छिए हम कापिड़ियानीको वधाई देते हैं।

छ्टे वर्षके उपहारका पहडा शन्य मनोरमा है। यह अन्य जीलकथाके आधारपर गुजराती मापामें लिखा हुआ है। जिसे हम अवला कहते हैं वह अपने जीलकी किस वीरताके साथ रहा करती है यही इसमें वताया गया है।

उपहारका दूसरा अन्य हन्मानचरित्र है । यह हिन्दी भाषामें पद्मपुराणकी एक कथाके आधारपर छिला गया है। इसके छेलक खण्डवा निवासी सुलचन्द पद्मसाह हैं। इसकी हिन्दी बहुत कुछ परिमार्जित होना मांगती है। उपहारके दोनों अन्य एयक भी छह छह आनमें सुरत चन्दावाड़ीके प्रतेपर मिछ सकते हैं।

सर्वाद्रशैकुण्डलीसागर—छेलक और प्रकाशक बाहानी गोविन्द हर्डीकर देवज्ञ हैं। मिछनेका पता—पी. एम. आगवेकर महेश्वरीमहाछ नियर कांचमन्दिर कानपुर।कीमत १) रु। यह फल्जि ज्योतिपका अन्य है। इसमें सन्देह नहीं कि छेलक महाशयने इस- भर बड़ा पारिश्रम किया है। पर खेद है कि इस विषयमें हमारा अनिधकार होनेसे हम इसके गुण दोपोंकी विवेचना करनेमें असमर्थ हैं। हां इतना कहना अच्छा समझते हैं कि फल्टितज्यो। तिपके अनुरागी इससे बहुत छाम उठा सकेंगे। हमें यहांपर अम्युदयमें प्रकाशित एक पुराने विज्ञापनकी स्मृति हो उठी है। यदि हमारे फल्टितसारसंग्रहके विद्वान् छेखक महाशय उसके सम्बन्धमें कुछ प्रयत्न करते तो जनसाधारणका बड़ा उपकार होता। न जाने क्यों आपका ध्यान उधर नहीं गया! संमव है वह विज्ञापन आपके अवछोकनमें न आया हो। हम फिर मी उसकी ओर पंडितनीका ध्यान आकर्षित करना चाहते हैं। पुस्तक साधारणतः अच्छी छपीं है। पर कीमत अधिक जान पड़ती है।

विद्वद्रत्नमाछा—छेखक श्रीयुक्त नाथूरामजी प्रेमी । प्रकाशक नेनिमत्र कार्यालय । यह पुस्तक अनकी वर्ष जैनामित्रके उपहारमें दीगई है । इसका विषय ऐतिहासिक है । इसमें जिनसेन, गुणमद्र, आशाघर, अमितगति, वादिराज, मिछिषेण और समन्तमद्राचार्य इन सात माहात्माओंकी गवेषणापूर्वक जीवनियां छिखी गई है । इसके पढ़नेसे छेखककी ऐतिहासज्ञताका पूर्ण परिचय मिछता है । छेखक महाशयने इस पुस्तकका संकलन कर गड्ढेमें गिरे हुए नेन साहित्यका बड़ा उपकार किया है । जैनियोंके अतिरिक्त जन साधारण भी इसके द्वारा जैन साहित्यकी बहुत कुछ बातें जान सकते हैं । पुस्तककी छपाई आदि सुन्दर है । दश आने खर्च करनेसे पृथक भी मिछ सकती है । पत्र, वस्वई १ शिराबागके पतेपर दिखना चाहिए।

.

अनुभवानन्द्-छेदक श्रीयुक्त ब्रह्मचारी शीत्र ब्रमाद्वी । प्रक्र-दाक जनित्र कार्योच्य । यह नैनित्रके उपहारकी दूसरी पुस्तक है । विषय नामहीने स्पष्ट है । पुस्तक अन्यात्मप्रेमियोंके वही काम-की है । वे इसे एक वक्त अञ्च्य पर्टे । यह हमारा उनसे अनुनेव है।

लिखितशास्त्राये—नैनियों और आर्यसमानियोंमें नो लेखिक शास्त्राये चल रहा या उसीका इस पुस्तकमें संग्रह किया गया है। किसका पदा प्रचल और किमका निर्वल है इस विषयमें इस कुल न लिख कर इसका भार विचारशीलोंके उपर लोड़ते हैं। पुस्तक-की कीमत दो आना है। मिलनका पता वा. चन्द्रमेन नैन वैद्य इयवा सिटी।

पष्टवार्षिक विवर्ण—मारतवर्षीय नैनिश्नाप्रवारकसमितिकी छटे वर्षकी रिपोर्ट । इसके देखनेसे समितिके कार्यकर्ताओं के असीम साहस परिचय मिछता है । नैनियोंकी सब संस्थाओं में हमारे विश्वासक अनुमार यही एक उत्तम संस्था है । यह इसीके साहसका काम है जो पास एक पैमा न होनेपर भी वार्षिक वनट १९०००, का पास करती है । नातिकी सबी और निकामसेवा करना इसीको कहते हैं। क्या हमारी वहीं वहीं संस्थाएँ इम आदर्श संस्थाके द्वारा कुछ शिक्षा प्रहण करेंगी !

सत्तपवर्षीय रिपोर्ट—दिगन्वर जैनप्रान्तिकसमापाळ्नेका सात वर्षका संक्षित हाछ। इसके पढ़नेसे जान पढ़ा कि समाने सांतं वर्षेमें कोई मारी महस्वका काम नहीं किया। हां केवछ उपदेशक फण्डका काम और और संस्थाओंकी अनेका अच्छा चळा। पर अव उसमें मी विन्न आता नान पढ़ता है। क्योंकि उपदेशक फण्डमें नितना ऋत्य था वह खर्च हो चुका। अब कुछ थोड़ासा वाकी है। संभव है उसके द्वारा चार छह महीने और काम चछ सके। हम नहीं मानते कि जिस संस्थामें बड़े बड़े धानिक शामिछ है, उसकी यह हाछत क्यों? जान पड़ता है उसके माछिक ऐसे जातीय सुधारके कामोंको पसन्द नहीं करते है। करें क्यों? जिनका धन असामयिक, अनुपयोगी और जातिके नष्ट करनेवाछे कामोंमें बड़ी उदारताके साथ खर्च होता है उन्हें इन कामोंसे जरूरत ? उनके छिए जाति कछ नष्ट होती हो तो वह आज ही हो जाय, उन्हें इसका कुछ दु:ख नहीं। ऐसे छोगोंके विचारोंपर खेद होता है। जातिके बुरे दिन यही कह-छाते है।

मथमवार्षिक विवरण—श्रीऋषमत्रद्यांश्रमके प्रथम वर्ष-का सक्षिप्त हाछ। वावू मगवानदीनजीके द्वारा समाछोचनार्थ प्राप्त । विवरणको पढ़कर वहुँत सन्तोष होता है। आश्रम अपना काम अच्छी तरह कर रहा है। पहछे वर्षमें ही उसे ३६ विद्यार्थियों-का मिछ जाना आगेके छिए वंहुंत उन्नतिकी आशा दिछाता है। आमदनी भी इस वर्षकी सन्तोष जनक हुई है। ११५९८॥) की आमदनी होकर ५८७॥॥) खर्च हुए हैं। इससे जान पड़ता है कि जैन समाजमें कुछ कुछ विद्याकी उपयोगिता समझी जाने छगी है। पर अभी जैनियोंके छिए बहुत कुछ करना बाकी है। इस छिए हम उनका ध्यान आश्रमकी ओर खींचते है। अभी जितना कुछ हो रहा है, उसके छिए केवल यही कहा जा सकता है कि हां कुछ न होनेसे यह अच्छा है।

इनके अतिरिक्त हमारे पास जैनवोर्डिंगलाहोर और ऐलक-

पन्नाटाट नेनपाठशाटाशोटापुरकी रिपोर्ट भी समाटोचनार्थ आई हैं। पर खेद है कि स्थानके न रहनेमे उनके सम्बन्धमें हम कुछ विशेष नहीं टिख सकें। हम उक्त संस्थाओं के उदार कार्यकर्ताओं से इस वावत समा चाहते हैं।

समाचारसार ।

जयपुर—से हमारे पास एक हितैषी महाशयका भेजा हुआ छेल आया है। छेल विलम्बसे पहुचनेके कारण हम उसे छाप न सके । उसका सक्षिप्त सार यह है, कि "जयपुरमें पहले जैनियोंकी वहुत संख्या थी पर जनसे जातिमें कन्याविक्रय और वृद्धविवाह-की बुरी प्रया जारी हुई है तबसे यहा जैनियोंकी सख्याका हास ही होता जाता है । घटते घटते आज मुन्किटसे छह हजार सख्या वची होगी । इतनेपर भी जातिके कुलकलक वृद्धेंको राम नहीं लगती जो मरते मरते भी वे विवाह करनेकी तैयारी करते हैं। वेचारी वालिकाओंका जीवन नप्ट करना चाहते हैं।पाठक, मुझे कुछ लिखनेकी नरूरत न थी, पर इस महीनेमें दो बूटे बाबा अपना विवाह करेंगे। मुझे वेचारी उन अवोध वालिकाओंपर द्या आई। मेरा हृद्य उनके मानी दु. बको न सह सका। इस छिए जातिके सामने यह हाल मुझे उपस्थित करना पड़ा। क्या जातिके पञ्च अपनी इन्द्रियोंको वश करके-एक दिनके भोजनकी परवा न करवे -इस घोर अत्याचारका प्रतिकार करेंगे? क्या उन अपनी लड़िकयोंके भावी जीवनपर खयाल करके उनके गलेपर चलती हुई छुरीको रोकेंगे 2 और इन बूढ़े न्याघोंके लिए इस

महापापका कोई भयानक दण्ड देनेकी कोशिश करेंगे ? जिससे ऐसा अत्याचार न हो । मैं आशा करता हूं कि जयपुरकी पञ्चायती इस बातपर अवश्य खयाल करेगी कि जिस स्थानको टोडरमल्जी, अमरचन्दजी, जयचन्दजी आदि पुरुषरत्नोंने अवतार लेकर पवित्र किया है उसकी छातीपर इस महाकलंकका दाग न लगने देगी। एक हितेषी।

विवाहमें दान—गोदेगांव निवासी श्रीयुक्त मोतीलालजी दगड़ा-का माघ विदी ८ को विवाह था । आपने चाहा कि हमारा विवाह नैनिववाह पद्धतिके अनुसार हो । इसपर लड़कीका पिता स-म्मत नहीं हुआ । एक ओरका यह दुराग्रह देखकर आप भी अपने धार्मिक प्रेमको नहीं दबा सके । आपने साफ कह दिया कि जैनपद्धतिके अनुसार विवाह होगा तब ही हम विवाह करेंगे नहीं तो हमें कुछ दरकार नहीं है । आपकी इस दृढ़तापर लड़कीके पिताको जबरन यह स्वीकार करना ही पड़ा । विवाह ठीक जैन-विधिके अनुसार सम्पादन किया गया । उस समय आपने जैन संस्थाओंके किए भी कुछ दान देकर अपनी उदारताका पारिचय दिया है । वह सबके अनुकरण करने योग्य है ।

१०१) नायहोंगरीके जैनमन्दिर । ११)। जैनसिद्धान्त पा० मोरेना ।

२१) सरस्वतीमवनआरा। ११) श्रीऋषमब्रह्मचर्याश्रमं ।

११) स्याद्वाद पाठशालाकाशी । ५) खण्डेलवाल पंच महासभा ।

छालचन्द काला मालेगांव ।

खेद और आनन्द दहलीमें—करीन ढाई महीनेसे विद्याप्रचा-रिणीजनसभा स्थापित है। उसके सभापति श्रीयुक्त रिक्ल्मलनी और उपसभापति लाला रामजीदास कागजी है। सभाका उदेश्य विद्याप्रचार और उपदेशादिके द्वारा नाविकी कुरीवियां नष्ट करना है। उद्देश्य वो बहुव अच्छा है यदि समाके कार्यकर्ता स्वयं उनपर चळकर औरोंको भी उसपर चळानेके छिए प्रयन्न करें। क्योंकि पर उपदेश कुसळ बहुवेरे की उक्तिको चरिवार्य करने वाछे वो बहुव हैं, पर उन छोगोंकी बढ़ी नक्रत है नो कह कर स्वयं भी उसपर चळने वाछे हों। समाजपर ऐसे छोगोंका ही बहुव प्रमाव पड़वा है।

हमें यह जानकर बहुत खेद होता है कि एक समाके कार्य-कर्ताओंने जिम उद्देश्यकों छेकर यह समा स्यापितकी है, वे स्वयं भी उस पर चलनेके लिए बान्य नहीं हैं । दहलीके एक सम्बाद दाताने हमारे पास जो समाचार छपनेके छिए मेने हैं और यदि वे सत्य हैं तो हम कहेंगे कि यह हमारे छिए नडी मारी छजाकी नात है जो हम स्वयं अपने म्यापित किये उद्देशपर नहीं चळते हैं। छेत्रकने लिखा है कि श्रीयुक्त समापति महारायने अपने मतीनेके ब्रिए एक ब्रह्मा दत्तक ब्रिया है। उसकी ख़ुरीमिं उन्होंने वार्मिक संस्थाओंकों भी कुछ दान दिया है और वह सबके अनुकरण करनेके योन्य है। इसमें सन्देह नहीं कि यह कार्य आपने बहुत अच्छा किया है। आपकी वर्गबुद्धिका इसमे परिचय मिळता है । पर ऐसी घुर्म बुद्धिके होनेपर यी फिर न जाने क्यों आपने इस मंगछ कार्यमें वेश्याओंका नाच करवाया! क्या इन कुळकळेकिनियांके विना आपके कार्यमें शोमा नहीं होती ! जो पैसा इन्हें दिया गया, क्या ही अच्छा होता यदि वही अपने देश या जातिके दुखी, अनाय, माइयोंके उपकारमें सर्च किया जावा ? इसीसे वो हम कहते हैं कि हमें उन द्योगोंकी नत्सरत है जो पर उपदेश कुश्च बहुतेरे इस उकिके

हिन्द्विश्वविद्यालय—के लिए वम्बईके निवासियोने लगमग टाई लाख रुपया दिया है। भारतवर्षके प्रधान न्यापारकी जगहसे बहुत थोड़ा द्रन्य मिला देखकर वड़ी निराशा होती है। निन वम्ब-ईके धनिकाने भारतवर्षके अकर्मण्य दलको मालामाल बना दिया, जिनसे कि आज देशका कुछ मी लपकार न होकर उल्टा अपकार हो रहा है, लनके लिए देशकी उन्नतिके मूल हिन्ट्विश्व-विद्यालयके लिए इतना योड़ा द्रन्य देना क्या संतोषकारक कहा जा सकता है! नहीं। आजा है वम्बईवासी जिस शहरमें रहते है जसकी योन्यताके माफिक धन द्वारा विद्यालयको लपकृत करेंगे।

इन्होर — की प्रतिष्ठा निर्वित्र समाप्त होगई । प्रतिष्ठाकारक वावा शील्चन्द्रजी जयपुर निवासी थे। खुशीकी वात है कि वावा-जीने संस्कृत न जानकर भी प्रतिष्ठा निर्वित्र समाप्त करवादी। आ-पके पास एक भाषाका प्रतिष्ठापाठ है। सुनते हैं कि उसीसे आपने प्रतिष्ठा करवाई थी। अच्छा हो यदि वावाजी उस प्रतिष्ठापाठका सर्व साधारणमें प्रचार करहें, जिससे प्रतिष्ठा करानेवालोंको भी सुगमता हो जायगी और जो प्रतिष्ठाकारकोंसे वर्तमानके प्रतिष्ठाचार्य हजारों रूपया ठहराकर प्रतिष्ठा करवाते हैं उनका पैसा भी वच जायगा।

प्रतिष्ठामें पन्द्रह हजारके छग भग जनसमुदाय एकत्रित हुआ था। सुनते है कि वाहरकी संस्थावार्छोंको भी कुछ सहायता मिछी है। कितनी ² यह टीक मालूम नहीं।

नवीन पत्र-फिरोजपुरकी जीवद्याप्रचारकसभाकी ओरसे एक मासिक पत्रका निकालना निश्चित किया गया है । यह हिन्दी, अंग्रेजी और उर्दूमें होगा । इसमें जीवदयाके प्रचार करनेवाले अच्छे अच्छे विद्वान् डाक्टरों और साइन्सवेत्ताओं के उत्तमोत्तम केस तथा और भी सब विषयके छेल रहा करेंगे। पत्र अपने दक्कका एक ही होगा। इतनेपर भी मूल्य केवल १) रु० ही रक्खा जाना निश्चित किया गया है। सभा चाहती है कि पत्रका जन्म मार्च महीनेसे हो जाय। दयांप्रेमियोंको ग्राहक होनेकी स्वीकारता देनी चाहिए। अमोलफचन्द फिरोजपुरछावनी।

जैनतत्त्वप्रकाशक-इटावेका तत्त्वप्रकाशक प्रकाशित होगया।

रत्नमाळा—सुना तो यह था कि खुनेंकी श्रीमती रत्नमाळाके दर्शन एक ही सप्ताह बाद हो नायँगे। फिर न नाने क्यों सप्ताहपर सप्ताह बीत गये तब भी उसके अभीतक दर्शन नहीं हुए १ यह विलम्ब एक गहरा सन्देह पैदा करता है। हम तो यह चाहते थे कि माळा अपनी कामनाएं पूर्ण करके विश्रान्ति लाभ करती।

जैनवोर्डिङ्ग-यह जानकर वही खुशी हुई कि वहवानी (निमाह)
में श्रीयुक्त ब्रह्मचारी श्रीतलप्रसादनी और मास्टर दर्यावासिंहनीके
उद्योगसे जैनवोर्डिङ्गकी स्थापना हुई है । उसके लिए लगभग छह
सात हजारका द्रव्य भी लिखा गया है । विशेष खुशीकी यह
बात है कि वहांके महाराजा साहब भी इसके सहायक हैं।
इस प्रजा प्रेमके लिए महाराजा साहब धन्यवादके पात्र हैं । निमाह
प्रान्तके जैनियोंमें सबसे पहला जागृतिका चिन्ह यही है।

उपाधिपदान—प्रातः स्मरणीय स्याद्वाद वा. पं. गोपाल्दासनीकी अपूर्व नैनिसद्धान्तज्ञतापर मुग्ध होकर कलकत्ता कॅालेजके श्रीश-तीशचन्द्र महामहोपाच्याय आदि प्रासिद्ध विद्वानोंने उन्हें न्याय-वाचस्पतिकी उपाधि प्रदान की है। पंडितजीका भिन्नधर्मियों द्वारा यह अपूर्व सम्मान देखकर यह कहे विना नहीं रहा जाता कि गुण ना हिरानो गुणगाहक हिरानो है। यही तो कारण था कि नैनसमाओं के द्वारा दी हुई पदवीसे चिढ़कर कुल अनुदार लोगोंने आकाश पाताल एक कर दिया था। सच है, चिरन्तनाभ्यास-निवृन्यनेरिता गुणेषु दोषेषु च जायते मितः। जिसका जैसा अम्यास होता है वह काम मी वैसा ही करता है।

ज्याहका स्वांग—वम्बई प्रदेशमें रुतवी नामकी एक जाति है। इस मातिमें प्रति दस या वारह वर्ष वाद व्याह होता है। गत दानिवारको स्रतमें इस जातिमें चार सौ व्याह हो गये। केवल एक दुल्हनंकी अवस्था वारह वर्षसे अधिक थी, अधिक दुल्हनें एकसे न्यारह वर्षके मीतर ही की थीं। दूल्होंकी अवस्था तीनसे नौ वर्षतक थी। विवाहके समय अधिकांश वरवधू अपनी माता पिताकी गोदमें वैठे थे। जिसमें वे रोवें चिल्लायँ नहीं इसलिये उन्हें लडढू पेढें सिलाये गये थे!

छदकर (गवाछियर) — में जैन छायब्रेरीकी स्थापना हुई है । वहांके उत्साही नव युवकोंको धन्यवाद है ।

जयपुर—से भी एक नवीन जैनपत्रका जन्म होना सुना गया है। कत्र होगा ! यह जाननेकी उत्कण्ठा है।

सूचनाएँ।

8

महाराष्ट्रीयलण्डेलवालपञ्चमहासमाके किसी भी फण्डका जिन जिन महारायोंपर रुपया लेना है, उन्हें उसके भेजनेकी कोशिश करनी चाहिए। विना रुपयोंके कितने ही काम रुके हुए पड़े हैं। वर्तमानमें सभाको एक उपदेशकके रखनेकी वड़ी आवश्यक्ता है। पर जवतक हमारे भाई रुपयोंके भेजनेकी जल्दी न करेंगे तब तक यह जरूरी काम रुका हुआ ही पड़ा रहेगा। हम आशा करते है कि सब सज्जन हमारी प्रार्थनापर अवश्य ध्यान देंगे।

प्रार्थी---खुशालचन्द नांदगांव. (नाशिक)

3

सस्ते और सुन्दर भावोंके चित्र।

जयपुरकी चित्रकारीकी प्रशंसा करना व्यर्थ है। उसकी देश देशान्तरोंमें प्रसिद्धि ही इस बातका प्रमाण है कि वह कितनी मनो-मोहिनी होती है। हमारे माई मंदिरोंके छिए हजारों रुपयोंके चित्र मंगवाते है पर उन्हें ठीक ठीक कीमत ज्ञात न होनेसे बहुत कुछ हानि उठानी पड़ती है। इस छिए हमने वर्द्धमानजैन विद्यालयमें इसका प्रबन्ध किया है।

यहांसे बहुत सुन्दर और सस्ते चित्र भेजे जा सकेंगे। इसमें एक विशेष बात यह होगी कि ये चित्र विद्यालयके चित्रकारीक्षासके अध्यापक तथा छात्रोंके तैयार किए हुए होंगे। हमें पूर्ण आशा है किहमारे माई सब तरहके वित्र यहींसे मंगवानेकी कृपा करते रहेंगे । मेनेजर-श्रीवर्द्धमानजैनविद्यालय जयपुरः

३

जैन पाउरााहाओं में जैनवर्मके जानकार अव्यापकोंकी बहुत आवश्यक्ता रहती है। न्याय व्याकरणादिके जानकार होने पर भी वे धार्मिक सिद्धान्तसे आनिभेक्त रहते हैं। इस हिए जैनवर्मकी उन्नतिमें बड़ी बावा पड़ती है। हमने ऐसे पंडितोंके हिए तथा गुजराती, मराठी, हिन्दी, ट्रेनिंगकॉंडेज या हाईस्कूटोंमें पढे हुए मास्टरीं और विद्यार्थियोंके हिए जैनवर्मके सिलानेका प्रवन्य किया है। उन्हें सब विषयका पत्र व्यहार नीचे पतेसे करना चाहिए। बुद्धकार श्रावक, हागगंज दमोह.

8

हम सब माइयोंसे प्रार्थना करते हैं कि वे अपने अपने गांवके पञ्चायती समाचारोंके मेजनेकी कृपा करें। हम उन्हें सहर्ष छोंगे। हमारे इस पत्रका यह खास उद्देश्य है कि इसमें जाति सन्वन्धी हर प्रकारके अगड़े प्रकाशित किये जाकर और उनसे होनेवाछी जातिकी हाळत दिख्छा कर उनके मिटानेका उपाय किया जाय। क्योंकि हमारी जातिके अध.पतनके कारण ये घरेळू अगड़े ही हैं। जबतक ये नष्ट न होंगे तबतक जातिकी उन्नति होना कष्ट साध्य ही नहीं किन्तु असंमव है। आशा है कि पाठक हमारी इस प्रार्थनापर ध्यान देंगे।

नातिका एक तुच्छ सेवक— उद्यराङ काश्रङीवाङ. पवित्र, असली, २० वर्षका ऑनमूदा, सैंकडों प्रशंसा पत्र प्राप्ते । प्रसिद्ध हानमेकी, अक्सीर दवा,



फायदा न करे तो दाम वापिस ।

यह नमक सुलेमानी पेटके सब रोगोंको नाश करके पानुनशक्तिको बढाता है जिससे मूख अच्छी तरह लगती है, मोजन पचता है और दस्त सीक होता है। आरोग्यतामें इसके सेवनसे मनुष्य, बहुतसे रोगोंसे चचा रहता है। इसके है । आरोग्यतामें इसके सेवनसे मनुष्य, बहुतसे रोगोंसे चचा रहता है। इसके सेवनसे हेजा, प्रमेह, अपच, पेटका दर्द, वायुश्र, संप्रहणी, अतीसार चवा सीर, कब्ज, खही दकार, छातीकी जलन, बहुमूत्र, गठिया, खाज, खुजली, आदि रोगोंमें नुरन्त लाम होता है। विच्छू, मिड्र, बरोंके काटनेकी जगह इसके अलिसे लाम होता है, श्रियोंकी मासिक सरावीकी यह दुरुत्ती करता है। इससे उदरी अपच दस्त होना, दूध डालना आदि सब रोगोंको दूर करता है। इससे उदरी अपच दस्त होना, दूध डालना आदि सब रोगोंको दूर करता है। इससे उदरी अपच दस्त होना, दूध डालना आदि सब रोगोंको एक दना सब गई सब रोगोंको एक दना सब गई सब रोगोंको एक दना सब गई सब रोगोंको अवस्य पास रखनी चाहिंगे। व्यवस्था पत्र साथ है। क्रीमंत की स्थाको अवस्य पास रखनी चाहिंगे। व्यवस्था पत्र साथ है। क्रीमंत की स्थाको अवस्य पास रखनी चाहिंगे। व्यवस्था पत्र साथ है। क्रीमंत की स्थाको अवस्य पास रखनी चाहिंगे। व्यवस्था पत्र साथ है। क्रीमंत की स्थाको अवस्य पास रखनी चाहिंगे। व्यवस्था पत्र साथ है। क्रीमंत की स्थाको अवस्य पास रखनी चाहिंगे। व्यवस्था पत्र साथ है। क्रीमंत की साथ हो। आति अवस्थ पास रखनी चाहिंगे। व्यवस्था पत्र साथ है। क्रीमंत की साथ हो। अवस्थ अवस्थ पास रखनी चाहिंगे। व्यवस्था पत्र साथ है। क्रीमंत की साथ साथ हो। क्रीमंत की साथ हो। अवस्थ अवस्थ अवस्थ अवस्थ साथ हो। क्रीमंत की साथ हो। क्रीमंत हो। क्री

नोट—हमारे यहां सब रोगोंकी तत्काल गुण दिखानेवाली दवाएँ तैरे रहती हैं। विशेष हाल जाननेको यही सूची मंगा देखी

मिलनेका पर्ताः है। दूसेन जैनवैद्ये इटाव